प्रकाशक का वक्तव्य

महात्मा ॐ आजकल योग पर बहुत कुछ विवेचना कर रहे हैं और अवसर अवसर पर पुस्तकें भी लिख कर हमें प्रकाशनार्थ देते रहते हैं। इसी प्रकार 'वज्रोली' जो मनुष्य को पूर्ण शक्ति शाली बना सकती है ॐ ने तैयार की है। और इसमें दी गई बातें सब ॐ ही के अनुभव की हैं। हम इस संबंध में अनभिज्ञ होने के कारण कुछ भी कहने में समर्थ नहीं हैं। जिस किसी महाशय को इस संबंध में कुछ शंका समाधान करना हो तो वे कृपाकर महात्मा ॐ से मिलें।

इन दिनों में कुछ महाशय जिनके विचार ॐ से नहीं मिलते हैं प्रायः हमसे उनकी पुस्तकों के संबध में वाद विवाद करने पर उतारू हो जाते हैं, परन्तु इस वक्तव्य द्वारा हम यह सार्वजनिक रूप से प्रकट करते हैं कि पुस्तकों के भाव, पुस्तकों की भाषा आदि की जिम्मेवारी सदा लेखक पर ही होती है प्रकाशक इस संबंध में विशेष कुछ भी जिम्मेवारी नहीं रखते और न यही मान लिया जाना चाहिए कि जो भी पुस्तक प्रकाशित की जावे उसमें व्यक्त भावों व भाषा के लिये प्रकाशक भी जिम्मेवार ही हो। वास्तव में पुस्तक का लेखक ही अपने विचारों को पूर्ण रूप से व्यक्त कर सकता है। लेखक की आज्ञानुसार कहीं कहीं और कभी कभी भाषा में केवल सुधार कर देने से ही प्रकाशक व लेखक दोनों एक ही विचार के नहीं हो सक्त हैं और न कहे जा सक्ते हैं। रहा हमारा निजी व्यक्तिगत संबंध जिसे ॐ जानते हैं या हम और जनता को इससे कोई विशेष संबंध कदापि नहीं हो सकता।

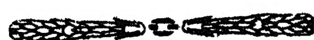
हमें पूर्ण विश्वास है कि योग ग्रंथावली की यह 'वज्रोली' पुस्तक योग में विश्वास व श्रद्धा रखने वालों के लिये महत्वशाली व उपयोगी सिद्ध होगी।

निवेदक—

व्यास सूर्यराज

मंत्री—म० प्र० मन्दिर।

विषय-सूची



विषय	पृष्ठ
प्रस्तावना	क
भूमिका	ग
वज्रौली मुद्रा	१
कठिनाइयाँ	२
भोजन	३
औजार	४
प्रथम साधन	५
औजार प्रयोग	७
अश्वी मुद्रा	१०
पवन वस्ती	१२
नौली क्रिया	१४
पारा खींचने में अड़चन	१६
कुछ अन्य बातें	१७
मनकी पवित्रता	१९
अपान की पवित्रता	२०
वीर्यवाही स्नायुओं को सुदृढता	२१
विनाऔजार पदार्थखींचना	२१
खींचने वाले पदार्थों की अन्वेषणा	२७
वज्रौली की पूर्णता	३३
पूर्णता की परीक्षा	३४
असली वीर्य के लक्षण	३४
उत्पत्ती	३५
फल	३६
स्ताम्भन और वज्रौली	४१
प्रजनन तत्व	४४
हल्कापन	४६
समाधी	५०
मृत संजीवनी	५४
स्वाध्याय बल	५७
अन्य सहायक प्रयोग	५९
औषधी प्रयोग	६२
उपसंहार	६५



प्रस्तावना

ॐ योग शब्द कितना व्यापक है, इस बातको जानने की यहाँ आवश्यकता नहीं है। यहाँ तो इतना ही कहना है कि योग शब्द का मुख्य अर्थ है हमारे और ब्रह्म के बीचमें के अंतराय (परदे) को फाड़ डालना। इस परदे को हटाने के लिये छः योग प्राधन हैं। जैसे कि क्रिया योग, प्राणयोग, मनोयोग, भावना योग, बुद्धि-योग, और बिन्दु योग। इन योगों की पूर्णतया अन्यान्याश्रयता और साम्यता है, जिसका कारण योग का प्रारम्भ क्रम है। हमारे इस योग का प्रारम्भ बिन्दुजय के लक्ष्य से होता है। अतः इसका नाम बिन्दु-योग है। जिस क्रिया से इस बिन्दुजय के तत्व को साधक प्राप्त किया करता है उस क्रिया का नाम ही बज्रौली मुद्रा है। इस मुद्रा में बिन्दुजय की विधी बताकर उसके लाभ आदि बतलाये गये हैं। बस इस मुद्रा को समझने के लिये ही यह छोटा सा निबन्ध लिखा गया है। इस निबन्ध में बज्रौली संबन्धी सभी बातों पर प्रकाश डालकर साधन संबन्धी कठिना-इयों को सुलभ बनाने की भरसक चेष्टा की गई है। यहाँ तक कि बज्रौली के अन्दर और बाहर को गुप्त बातों को भी खोल दिया गया है जिनको पढ़कर साधक बज्रौली संबन्धी बहुत ही

गलतफ़हमियों को सहज ही हृदयांगम कर के समझ सके कि बज्रौली का रहस्य साधकों को भोगरूप पाप में लगा कर वीर्य का नाश करना नहीं अपितु उसको निर्दोष बना पारद की शद्रश्यता में लेजा कर ऊर्ध्वरेता बना ईश्वराभिमुख कर देना है। (केवलं पारदोपमम्) वीर्य का पारे की शद्रश्यता में आजाना ही ईश्वर प्राप्ति के माग में प्रवेश करना है। जब यही ऊर्ध्वगामी होकर सहस्रार की दिव्य किरणों में लग्न हो जाता है तब ही साधक ब्रह्मरूपता को प्राप्त हो जाया करता है। यही तत्व बज्रौली मुद्रा का सार है। जिसको समझ कर साधक उन मूढ किंवदन्तियों और धूर्तों के माया जालसे बच सकेंगे जो बज्रौली मुद्रा को भोगरूप, पाप का साधन बनाते हैं। इन गुप्त और प्रकट बातों के साथ में ॐ ने पाठकों के सुविधार्थ बज्रौली संबन्धी औजार और आसनों के चित्र भी दिये हैं जिससे उनको पाठक सुगमता से समझ सकेंगे।

शायद इस निबन्ध को पढ़ कर कुछ गुप्तता के पोषक ॐ को यह कहें कि ऐसी गुप्त बातों को आम जनता के सामने नहीं रखना चाहिये। यह तो श्रद्धालु अधिकारियों को ही देना चाहिये। इन सज्जनों से ॐ का इतना ही कहना है कि यदि कोई वस्तु गुप्त नाम से कहीं और रखी जाने की हो तो वह एक मात्र पाप ही है। यही कारण है कि मनुष्य मात्र अपने पापप्रद कार्यों को छिपाने का प्रयत्न किया करते हैं। ॐ के अनुभव में धार्मिक बातों को गुप्त रखने का तरीका व्यभिचार

पूर्ण तंत्रों और स्वार्थपरता से ही चला है। यदि ऐसा न होता तो भगवान् गीता में और उपनिषदों में कहीं भी यह कहते नहीं मिलते कि मैं तुमको वह गुप्त और पवित्रताओं की राजाविद्या बता रहा हूँ। हम तुमको यह गुप्त तत्व बता रहे हैं जहाँ पर मन वाणी और बुद्धि नहीं पहुंच सकती है।

ॐ के विचार में इस बेहूदी गुप्तता ने ही भारत की बहुतसी बहुमुल्य विद्याओं का नाश किया है। यदि अब भी हम इस पाप से नहीं छूटेंगे तो हमारा जो कुछ है वह भी नाश हो जायगा। आज इस गुप्तपन के पापसे मुक्त रह कर ही (चाहे भौतिकता में ही सही) पाश्चात्य जगत ऊपर उठ रहा है। अतः हमें किसी भी साधन को गुप्तता की चिता में फूकना नहीं चाहिये। रही श्रद्धा और अधिकारी की बात। इनका स्थान तो आज अंधविश्वाश और कामनाओं ने ही ले लिया है। पूर्वकालीन श्रद्धाकी दृष्टि में भोग नाम का कोई पदार्थ ही नहीं था। उदाहरणार्थ नचीकेता को ही देख लीजिये वह यमराजके सब कुछ देने पर भी कहता है कि कुछ हो तो लूँ बिना हुई वस्तु को देने और लेने लगना ही तो सबसे बड़ी मूर्खता है। साधक की इस मोक्ष स्वरूप अखंड धारा का नाम ही श्रद्धा है। मोक्ष मार्ग में इस श्रद्धा और साधक का एक स्वरूप माना है इस श्रद्धा से युक्त साधक के लिये भोगों का अस्तित्व ही बन्धन, पाप, अत्याचार और सबसे बड़ा व्यभिचार है। इसके अस्तित्व का अभाव मुक्ति का तात्विक बीज है। आज इस कामकामी संसार में उप-

रोक्त श्रद्धालु अधिकारी का मिलना ही दुस्तर है। जिधर देखो उधर 'अंधेनैव नीयमान यथान्धा' अंधविश्वास का साम्राज्य है आज के गुरुओं के यहाँ विवेक वैराग्य सम्पन्न सदाचारी, संयमी वासनाक्षयी अधिकारी नहीं अपितु विवेक, वैराग्य, संयम, सदाचार से रहित संपत्तिशाली भोगों के पुतले, सिद्धि और चमत्कारों के चाहक जो भोग व कामना की पूर्ति के नहीं होने पर गुरु की कौन कहे भगवान् तक को भी छोड़ देने वाले कामी पुरुष ही श्रद्धालु अधिकारी माने जाते हैं। यदि उपरोक्त विवेचन सत्य है तो संसार श्रद्धालु अधिकारी का नहीं अपितु अंधविश्वाशी, कामकामियों का ही है। तो फिर किसी गुण पोषक और श्रद्धालु अधिकारी के समर्थक को संसार से आज ही कूच कर देना चाहिये। नहीं, ऐसा नहीं, शास्त्रों में यह भी लिखा है कि जब २ भी संसार में अंधविश्वास और कामनाओं का अधिकार हो जावे तब २ ही सच्चे ब्राह्मण और संन्यासियों को घर २ घूम कर जनता में सत्यतत्व का प्रचार करना चाहिये। यह अर्थ भगवान् श्री आदि शंकराचार्य के निम्न लिखित वाक्य का है कि 'कोवा गुरु योहि हितोप देष्टा' गुरु स्वार्थ परता की दीक्षा से नहीं अपितु हितका उपदेश देने से होता है। इस सर्वहित सत्य उपदेश से कामकामी पुरुषों को कामना का दमन (चाहे थोड़ा ही क्यों न हो) होकर शुद्ध श्रद्धा की जागृति होगी जो समय पर विस्तार पाकर विश्व कल्याण का कारण होजावेगी। अन्यथा गुरुता और अधिकारियों के भरोसे हमारी विद्या तो नाश होगी ही और अध-

कचरे साधनों से लोगों को हानि भी अधिक उठानी पड़ेगी। अतएव ऐसे गुरुतर कार्य का यापन करने में वही व्यक्ति सफली भूत हो सकेंगे जिसके हृदय में संसार का कल्याण करने की लग्न होग, सत्य विद्या का जीर्णोद्वार करने की शद्प्रेरणा होगी एवं निजत्व के अभाव के साथ ही साथ निस्वार्थ भावना का समावेश होगा।

ॐ जो स्त्री के बिना वज्रौली का सिद्ध होना असम्भव मानते हैं, वह अपने को व्यभिचारी, भ्रष्ट और वज्रौली जैसी शुद्ध वीर्य-रक्षक विज्ञानिक क्रिया को नष्ट करने के पाप को अपने ऊपर लादते हैं। हां! जैसे एक सद्गृहस्थ अपनी सद्गृहस्थी को निबाहता हुवा ईश्वर प्राप्त कर सकता है वैसे ही एक वज्रौली सिद्ध ईश्वर प्राप्त मनुष्य भी अपने जीवन रुपि सर्प के मुख में से कामुकता के दाँत या विषय विष रुपि विष की थैली निकाल कर काम जयी होकर सद्गृहस्थीको निबाह सकता है।

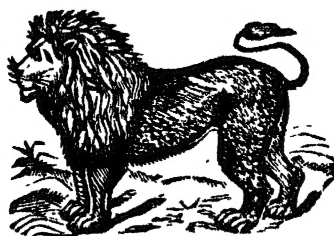
इस तत्व को समझाने के लिये ही इस पुस्तिका का दूसरा भाग लिखा गया है न कि कामी बनाने के लिये। इतना होते हुए भी वज्रौली की मुख्य मुक्त-सिद्धि ब्रह्मप्राप्ती को नैष्ठिक ब्रह्मचारी और गौण सिद्धिको कामजयी सद्गृहस्थी प्राप्तकिया करता है। इनसे अन्य कामासक्त मनुष्य वज्रौली को छूकर अपनी मौत आप बनते हैं। इन दोनों तत्वों का अनुभव अपने २ चरित्रों के अनुसार साधक वज्रौली मुद्रा करके ले सकते हैं।



अनुभव की परिभाषाः—

ॐ इस निबन्ध में बताये हुए मात्र साधन अनुभव सिद्ध हैं। अनुभव दो तरह का होता है, एक क्रिया-साध्य, और दूसरा विज्ञानबुद्धि-साध्य। क्रिया-साध्य साधनों को ॐ ने साधकों द्वारा एक बार नहीं अनेक बार परीक्षा करके लिखा है। मनोविज्ञान और बुद्धिविज्ञान-साध्य साधनों की परीक्षा विज्ञानबुद्धि द्वारा ही हुआ करती है जिसका भी ॐ ने भरसक प्रयत्न किया है। इन दोनों अनुभवों के मिलाप से ही, एक पूरा अनुभव सिद्ध हुआ करता है। इस पूर्ण अनुभव का नाम ही सच्चा अनुभव होता है। इस सच्चे पूर्ण अनुभव से ही साधकों को पूर्ण सिद्धि मिला करती है। अतः पूर्ण अनुभव का नाम सिद्धि और पूर्ण सिद्धि का नाम अनुभव है। जो साधक अनुभव की इस परिभाषा को समझ लेगा वो ही अनुभव-सिद्ध होकर सिद्धि को प्राप्त कर सकेगा। क्रिया-साध्य साधन का नाम क्रिया और मनोविज्ञान, बुद्धि विज्ञान-साध्य साधन का नाम चमत्कार कहा जाया करता है।

विश्वात्मा ॐ



* ॐ तत्सत् *



भूमिका

विश्वात्मा ॐ ने इस पुस्तक को लिख कर भारतीय साधकों का हित साधन ही किया है। योग, समाधि और संयम का महत्व असाधारण है। परन्तु इन दोनोंकी प्राप्ति बिना धारणा और ध्यान के नहीं हो सकती। धारणा को सफल करनेके लिये अनेक प्रकार की मुद्राएँ करनी पड़ती हैं। जैसे अगोचरी, भूचरी, चाचरी, खेचरी और साम्भवी आदि। योग-शास्त्र में मुद्राओं का महत्व अनुपम है। मुद्राओं से अनेक प्रकार के लाभ हो सकते हैं और असाधारण सिद्धियें भी इनके द्वारा प्राप्त की जा सकती हैं।

साम्भवी और षणमुखी मुद्रा से जिस प्रकार मन और प्राणवायु को विजय कर अंतःकरण की शुद्धि से संप्रज्ञात् समाधि को प्राप्त कर सकते हैं—ठीक वैसे ही योगी लोग वज्रोली मुद्रा द्वारा वीर्य सिद्धि कर समाधि को प्राप्त हो सकते हैं। योग शास्त्रों का सिद्धान्त है कि "मन, वायु और वीर्य यह तीनों एक ही पदार्थ है, इन तीनों में से किसी एक को वशीभूत करने से तीनों वशीभूत हो जाते हैं"। अतः एव योग-शास्त्रों में इन तीनों को वशीभूत करने की पृथक २ प्रणालियें बतलाई गई हैं जैसे—ईश्वर प्रणिधान या एकत्व के अभ्यास से मन

को, प्राणायाम से वायु को वशीभूत करने का आदेश है—ठीक वैसे ही 'वज्रौली मुद्रा' से वीर्य को वशीभूत किया जासकता है।

आज कल क्रिया-योग के विशेषज्ञ बहुत ही विरले महात्मा मिलते हैं। कारण सूक्ष्म विषय की बातें कहने से उसका प्रत्यक्ष में कुछ भी असर नहीं होता। श्रद्धा और भक्ति से उन बातों को सुन लेने या मान लेने पर ही निर्भर रहना पड़ता है परन्तु स्थूल विषय की स्थूल क्रियाओं को करने और करवाने वालों पर भौतिक दृष्टि से भी अधिक उत्तरदायित्व है। इसमें साधक या सिद्धि के प्रयत्नों की सफलता या असफलता स्पस्ट दिखलाई पड़ती है अतः बिना अनुभव किये स्थूल कार्यों की शिक्षा देना शिष्यों के सामने अपना पतन करना है और साथ २ साधक का जीवन भी नष्ट भ्रष्ट कर देने का अपराधी बनना है। इतनी कठिनतम क्रिया को सहज में बतलाने के लिये जो प्रयत्न 'वज्रौली' के लेखक महाशय ने किये हैं वे अवश्य ही प्रशंसनीय और सर्व साधारण के उपयोगी हैं। इस पुस्तक में केवल उपदेश ही नहीं दिया गया है वरन् प्रत्येक क्रिया को करने के लिये आसन और उसके यन्त्रों (ओजारों) के चित्र नाम और परिचय भी दे दिये हैं। स्वतंत्र शीर्षकों को देखने से तो पुस्तक का विषय स्पष्ट समझ में आजाता है। सर्व साधारण पाठकों को भी इससे यह शिक्षा मिल सकती है कि 'वज्रौली मुद्रा' से वीर्य सिद्धि किस प्रकार से हो सकती है।

देश में इस समय बहुत से पुरुष हीन वीर्य होकर अपने जीवन को बरबाद कर देते हैं। खास कर युवक युवतियाँ तो अनेक वैद्य और डॉक्टरों को शरण जाकर अपना दम्पति सौख्य स्थिर करना चाहते हैं। उनके लिये यह मुद्रा बहुत उपयोगी हो सकती है। यदि वे अपने श्री गुरुदेव के सामने इस क्रिया को सिद्ध करलें तो भोग और मोक्ष दोनों ही मिल सकते हैं। छान्दोग्योपनिषद् में लिखा है कि 'आचार्याद्धयेव विद्याविदिता साधिष्ठं प्रपयति' गुरु के मुख से जानी विद्या ही यथेष्ट फल को प्राप्त करवाती है। शिव संहिता कहती है कि 'भवेद्वीर्यवती विद्या गुरु वक्त्र समुद्भवा अन्यथा फलहीनास्यान्निर्वीर्याप्यति दुःखदा'। गुरु मुख से सीखी हुई विद्या ही वीर्य वती होती है अन्यथा—अपने मन से पुस्तकें पढ़ने आदि से—जो विद्या आती है। वह दुःखदाई होती है। इस लिये यदि हमें अपने 'बज्रौली मुद्रा' विद्या को सफल, वीर्यवती, और सुख वाली बनानी है तो इसे गुरु मुख से ही समझ कर उन्हीं के सामने—इसका साधन करना चाहिये।

इस पुस्तक में सार रूप में 'बज्रौली मुद्रा' सम्बन्धी मुख्य बातें आगई हैं। स्त्री संभोग आदि विषयों को सीमित भाषा में लिख कर लेखक ने जिस प्रकार बज्रौली के नाम पर व्यभिचार करने वालों का और इस विद्या को गुप्त रखने की बहानेबाजी से साधकों के जीवन और इस उत्साह को नष्ट भ्रष्ट करने वाले अयोगियों को सावधान करदिया है, ठीक वैसे ही सज्जन

साधकों को बतला दिया गया है कि यह 'बज्रौली मुद्रा' अपने वीर्य की रक्षा और ब्रह्म तेज की प्राप्ति करने के लिये है। इसका दुरुपयोग करने वाला साधक योग से विमुख होकर भोगी और रोगी होता हुआ स्वयं अपना पतन कर देता है। अतः एव हम भूमिका को समाप्त करते हुए पाठकों का ध्यान 'बज्रौली मुद्रा' के महत्व पूर्ण। वीर्य रक्षा की ओर खींचते हुए उचित परामर्श देते हैं, कि इस पुस्तक को पढ़ कर आप स्वयं लाभ उठावें और अपने इष्ट मित्रों को वीर्य-रक्षा का ज्ञान करवावें जिससे अपने देश, समाज और धर्म का अभ्युदय हो। अस्तु।

भवदीय शुभेच्छु
पं० बद्रीदास पुरोहित
"वेददान्त भूषण"
'वनस्थ'



वज्रौली मुद्रा



ज्रौली-मुद्रा योग-शास्त्र का एक चौकन्ना बना देने वाला साधन है। इसका नाम सुनते ही श्रोता के मन में उत्साह, संशय, भय, आश्चर्य दौड़ने लगा करता है। क्योंकि यह साधन भोगी और त्यागी दोनों ही को प्रोत्साहित करता है। भोगी तो इसको पढ़ते ही हजारों स्त्रियों को भोगने की खुशी के झूले में झूलने लगता है। त्यागी इससे ईश्वर मिलन की आनन्दी वृति का रसस्वादन करने का स्वप्न देखा करता है। यह दोनों बातें ही श्रोता के उत्साह का कारण है परन्तु दूसरे ही क्षण वह संशय की सूली पर चढ़ा हुआ अपने को भय की श्रृङ्खला से जकड़ा हुआ देखता है। वह सोचता है क्या यह साधन मुझ से हो सकेगा। यदि बिगड़ गया तो मेरा क्या हाल होगा, इत्यादि बातें सोचता हुआ मन ही मन कहा करता है कि कैसा आश्चर्य है कि भोग मोक्ष दोनों एक साथ ही प्राप्त हो सकते हैं। क्या भोग की पत्नी मुक्ती और मुक्ति का पति भोग हो सकता है ? कदापि नहीं, यदि ऐसा होता तो मोक्ष-मार्गी पुरुषों को सर्व त्यागी क्यों कहा जाता ? क्या कभी जननेन्द्रिय से प्रकृति विरुद्ध जल दुग्ध, घृत, मधु आदि

द्रध और पारद आदि ठोस पदार्थ खींचे जा सकते हैं ? यही बातें हैं जो साधक को उत्साहित करती हुई भी संशय युक्त करके आश्चर्य में डाला करती हैं। ॐ पाठकों के हितार्थ उपरोक्त बातों को अपने अनुभव और बुद्धि के अनुसार इस लेख में हल करना चाहता है जिससे पाठक बज्रौली की सत्यता को जान कर ही उसमें प्रवृत होकर बज्रौली की बहुत सी कठिनाइयों को पार कर जायेंगे।

❀ बज्रौली की कठिनाइयाँ ❀

ॐ एक तो कठिनता होती है और एक मृत्यु से खिलवाड़ करना होता है; अतः बज्रौली कठिन ही नहीं अपितु मृत्यु से खिलवाड़ करना है। जैसे मृत्यु को खेल में जीतना कठिन ही नहीं अपितु दुस्तर भी है तैसे ही बज्रौली की कठिनाइयों से पार पाना भी दुस्तरातिदुस्तर है क्योंकि ये साधन अदृश्य लोक (शरीर के अन्तर भाग) का साधन है। इसके सिद्ध करने में बुद्धि के सिवाय अन्य कोई भी इन्द्रिय काम नहीं दे सकती है। अतः यह इन्द्रिय-ग्राह्य साधन नहीं बुद्धि-ग्राह्य है। जैसे "बुद्धि ग्राह्यमतीन्द्रियम्"। इन्द्रिय में शलाका डालने तक ही तुम्हारे हाथ आंख आदि इन्द्रियें काम कर सकती हैं किन्तु इसके आगे वह हाथ भी सलाका को अन्दर ढकेलने के सिवाय कुछ नहीं जान सकता कि वह शलाका किधर कहाँ जाकर क्या काम

कर रही है, यहाँ तो बुद्धि के संकेत द्वारा अन्तरस्पर्श ही साधक को कुछ जता सकता है कि अन्दर क्या हो रहा है अतः इस साधन के अन्तर कार्यों को समझना इतना ही कठिन है जितना अंधे को भूँगली (नलिकाष्ट) में डाली हुई सूई के छिद्र को समझना कठिन हुआ करता है। इसीलिये ही तो ॐ कहा करता है कि बज्रौली के साधन में लगना अपने को अन्ध कूप में ढकेल देना है । उपनिषदों के मतानुसार शरीर के अन्दर जीवन तन्तु इतने सूक्ष्म हैं कि जितने बाल के अग्र भाग के सौ टुकड़े करके उसके शतांश (१०० मा) भाग की सूक्ष्मता हुआ करती है। जिनको एकाग्र सूक्ष्मातिसूक्ष्म बुद्धि के सिवाय साधक किसी साधन या (सूक्ष्मदर्शी) यन्त्रों तक से भी नहीं देख सकता है । यद्यपि इनमें बहुत सी जीवन किरणें ऐसी हैं जिनको स्पर्शन आघात नहीं छू सकता है या स्पर्शन आघात के नीचे वह नहीं आसकती हैं फिर भी यह अज्ञात लोक का कार्य है जिसमें थोड़ी भी गलती होने पर साधक दुखोंके गर्तमें ही नहीं अपितु कभी २ मौत का शिकार भी हो जाया करता है। अतः साधकों का कर्तव्य है कि वह अपने को किसी सच्चे अनुभवी गुरु की सहायता से सोच समझ कर ही इस साधन में लगावे ।

❀ भोजन ❀

ॐ बज्रौली के लिये निम्न लिखित वस्तुओं को छोड़कर मात्र पदार्थ ग्राह्य ही हैं। त्याज्य पदार्थ हैं:—तेल, मिर्च, खटाई,

लहसन, प्याज, मांस और अति उष्ण, अति तीक्ष्ण खाद्य पदार्थ, गांजा, सुलफा, अफीम, भंग, शराब, कोकीन, तम्बाकू, जरदा, नस्य, काफी आदि पदार्थ भी बिलकुल छोड़ देने चाहिये। अन्य खाद्य पदार्थों में भी रजतम की प्रधानता को छोड़ कर ही भोजन करना चाहिये। सर्व साधारण के लिये दाल, रोटी, शाक, भात, खिचड़ी आदि पथ्य ताजे फल और सूखे मेवे बहुत लाभप्रद होते हैं। बज्रौली के लिये सबसे प्रधान भोजन दुग्ध, मक्खन व घृत ही है। जिस साधक को ये भरपूर न मिल सकें वे बज्रौली मुद्रा को कभी न छूवें और यदि छूवेंगे तो कल्पनातीत हानि होगी।

❁ बज्रौली के औजार ❁

ॐ बज्रौली-मुद्रा के लिये चार प्रकार के औजारों की आवश्यकता हुआ करती है। इसके बिना साधकों को बज्रौली मुद्रा में सफलता नहीं मिलती है। इनमें से नं० १ और नं० ४ तो सीसे और तांबे के हैं, और नं० २ व नं० ३ चाँदी के। इनमें से नं० १ से नं० ३ तक की मोटाई सूत २ और लम्बाई ७ इञ्च होनी चाहिये। नं० १ सीसे वाली ठोस और आगे से इन्द्री में डालने वाले भाग की ओर से १ एक इञ्च मुड़ीहुई होनी चाहिये और नं० २ चाँदी वाली पोली नलीके दोनों भाग ऊपर को ही मुड़े हुए होने चाहिये। इसका बाहर का भाग पेच वाला और अन्दर का भाग साफ रहना चाहिये। नं० ३ वाली पोली नली का अन्दर

चित्र ७ योग

नं० ३. धातु की १० इं० लम्बी २ सूत मोटी

पानी या हवा भरने की जगह

पेच कसने की जगह

इन्द्री के अन्दर डालने का भाग

नं० १ चाँदी की सलाई २ इं० मोटाई २ सूत

पेच कसने की जगह

नं० २ नाप तोल वही

इन्द्री के अन्दर डालने का भाग

नं० ४ हाथ से पकड़ रखने का भाग

नाप तोल वही

इन्द्री से डालने का भाग

रबड़ की नली लम्बाई ३ फुट, मोटी उतनी ही जितनी इन्द्री में आसके

नं० ४ को छोड़कर और सब अस्त्रों के काम इसी से लिये जासकते हैं।

इन्द्री के अन्दर का भाग

का भाग ऊपर को व बाहर का भाग नीचे को मुड़ा हुआ रहना चाहिये। इसके दोनों ही भाग साफ होते हैं। नं० ४ तांबे वाली पोली नली दो सूत से कुछ मोटी, १०-१२ इंच लम्बी होती है। जिसके नीचे के भाग में पेच और ऊपर के भाग में एक प्याली लगी होनी चाहिये (चित्रों से पूर्णतया समझलो) इनमें से नं० १ तांबेवाली को छोड़कर अन्य तीनों का कार्य ॐ अब रबड़ की नली से भी लेन लगा है जो बहुत ही सुगम और खतरे से रहित सिद्ध हुई है परन्तु इसमें एक कमी अवश्य ही रह गई है कि वह अन्दर से मुड़ी हुई नहीं है। यह नली दो सूत मोटी और तीन फुट लम्बी होनी चाहिये। रबड़ की नली को काम में लेने से प्रथम उसको उत्तम तरह से साफ कर लेना चाहिये। साफ करने की विधी यह है कि बाहर से तो उसको साबुन आदि से धो लेना चाहिये और अन्दर से उसमें जल भर कर उसके बाहर के भाग को खूब मलना चाहिये इस क्रिया से उसके अन्दर का सब मैल धुल कर वह अन्दर से बिलकुल साफ हो जायगी।

❁ सर्व प्रथम साधन ❁

ॐ इस साधन को आप सबसे प्रथम आरम्भ करदें और सबके सहायक रहते हुए सबके अन्त तक चालू रक्खें। इसके पूर्णतया सिद्ध होजाने पर साधक का अपान पर अधिकार स्नायु सञ्चालन की शक्ति प्राप्त होकर उनमें बल का विकास होने लगता है, साथ ही स्तम्भन शक्ति भी बढ़ती जाती है। इस क्रिया की सिद्धि के हो जाने पर ही साधक बिना नली के पारदादि

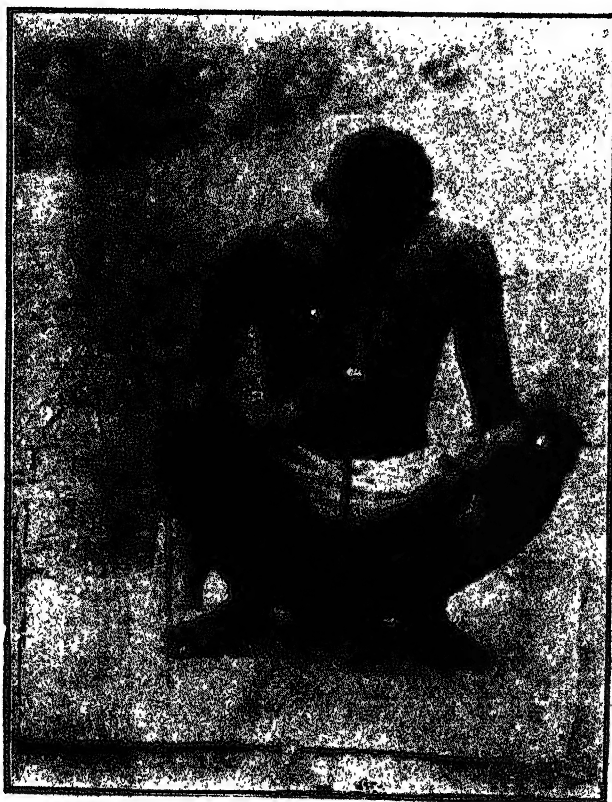
पदार्थों को खींचने की शक्ति प्राप्त किया करता है परन्तु क्रिया को मनोविज्ञान पूर्वक करना चाहिये। ॐ ये क्रिया नहीं अपितु, बज्रौली सिद्धि का मूल मन्त्र है। क्रिया इस तरह है कि जब २ भी आप लघु शंका किया करें तब २ ही अपने दांतो * को उपर नीचे से मिलाकर बलपूर्वक दबाते हुए अपनी मूत्र धारा के तीव्र हो जाने पर एक दम रोक लिया करें। इस वेग को एक बार लघुशंका करने में चार बार रोकना और छोड़ना चाहिये। ऐसे ही इन्द्रिय से खीचे जाने वाले पदार्थों को भी रोक २ कर ही छोड़ा करें। जब आप इस अभ्यास के बल से पारद को रोकने लगेंगे तो आपको बज्रौली में सफलता प्राप्त हो जायगी। यदि किसी साधक को मूत्र के वापिस खीचने में कुछ हानि की सम भावना हो (सो तो है नहीं) तो उसको जल, दुग्ध, घृत आदि को ही रोक २ कर छोड़ना चाहिये। जलके रोक २ कर छोड़ने से इन्द्रिय के अन्दर के विक्रित पदार्थ भी धुलने लगते हैं जिनके धुलने पर आकर्शित पदार्थ शीघ्र और अधिक फल देने लगते हैं। यह क्रिया सुगम होकर भी अधिक फल देने वाली है।

* दांतों को ऐसे दबा कर क्रिया करने वाले साधकों के दांतों में कभी कोई रोग नहीं हुआ करते हैं। यदि कोई सर्व साधारण मलमूत्र त्याग करने वाला पुरुष भी इस क्रिया को नियमित रूप से करेगा तो उसके दांतों को बहुत लाभ होगा। दांतों के रोगी लाभ उठावें।

❀ औजारों के प्रयोग की विधी ❀

ॐ इन औजारों में से सर्व प्रथम नं० १ शीशे की ठोस शलाका को निम्न लिखित क्रम से प्रयोग में लाना चाहिये। सर्व प्रथम इस शलाका को किसी कपड़े से खूब रगड़ कर साफ करके थोड़ासा घी लगा कर प्रथम दिन करीब एक अंगूल ही इन्द्रिय में प्रवेस करना चाहिये यहां जहां पर आपकी इन्द्रिय का कुछ मोटा सा भाग है शलाका कुछ कठिनता से अटक कर अन्दर जाया करती है अतः घबराने की कोई आवश्यकता नहीं; कार्य हठ से नहीं साहस और धैर्य से करना चाहिये। यह कठिनता १–२ दिन में अपने आप ही मिट जायगी। यद्यपि इस छल्ले के पार करने पर करीब पाँच अँगुल तक रास्ता साफ होने से शलाका अपने आप ही सुगमता से अन्दर जाया करती है तथापि शलाका को एक २ अंगूल ही अन्दर डालना चाहिये। शलाका के पांच छः अंगुल और जाने पर अण्ड कोष के बीच में शलाका एक बार फिर कुछ अटकेगी। यहां पर और भी धैर्य्य, साहस और एकाग्रता की आवश्यकता है। शलाका को बार २ घी लगा कर डालने से २-३ दिन में रास्ता अपने आप ही नरम होकर खुल जायेगा जिसके खुल जाने से शलाका ८ से ११ अंगुल अन्दर जाने लगेगी, बस यहां पर आपकी इस शलाका का कार्य्य पूर्ण हो जाता है। इसकी पूर्णता की मोटी परीक्षा शलाका का मूत्राशय पर आघात पहुँचाना ही है। मूत्राशय पर आघात पहुँचने का चिन्ह मूत्र का प्रवाहित हो जाना ही है मूत्र प्रवाह किसी २ साधक का

किसी २ समय इतना तेज़ हो जाया करता है कि साधक के रोकने पर भी हाथ में निकल जाया करता है। इस सब कार्य को साधक १२–१३ दिनों में समाप्त कर दिया करता है। इसके पूर्ण हो जाने पर साधक को नं० २ चाँदी वाली पोली नली और नम्बर ३ तांबे वाली धमनी से काम लेना पड़ता है। विधि यह है कि नं० २ चांदी वाली पोली नली के सफा भाग को इन्द्रिय में ऐसे डाले जिससे उसका पेचवाला भाग ऊपर को रहे। पश्चात् नं० ३ तांबे वाली के पेच को उस चाँदी वाली के पेच पर कस देना चाहिये ऐसा करने से नं० ३ का प्याली वाला भाग आपके ठीक मुख के पास आ जावेगा। प्याली के मुख के पास आजाने पर उसमें उसी प्रकार मुख लगा कर जैसे सुनार अपनी फूकनी में लगाया करता है, वायु भरनी चाहिये। जब वायु इन्द्रिय में पूर्णतया भर जावे तब उसको बाहर जाकर निकाल देना चाहिये। वायु निकालते समय पहिले मूत्र और पीछे कुछ भाग सहित फड़ २ करती हुई वायु बहुत जोरों से निकला करती है। इस क्रिया से वायु ५–७ दिन में ही पूर्ण रूप से भरने और निकलने लगेगी, वायु पूर्णतया भर जाने पर नाभि के नीचेके भाग 'पट्टु' में एक विशेष प्रकार की फटन जैसी वेदना मालूम हुआ करती है जिससे साधक को भान सा होने लगा करता है कि मानो मूत्र बाहर निकलने को बाधित कर रहा है। यह विशेष फटन ही साधक की वायु के पूर्ण भर जाने की सूचना और इस साधन की सफलता का चिन्ह है। इसके पूर्ण हो जाने पर साधक को नली की प्याली में जल भर कर फूँक के द्वारा



नं० ३ की नली नं० २ वाली नली में कसकर
मुख से वायु भरी जारही है ।

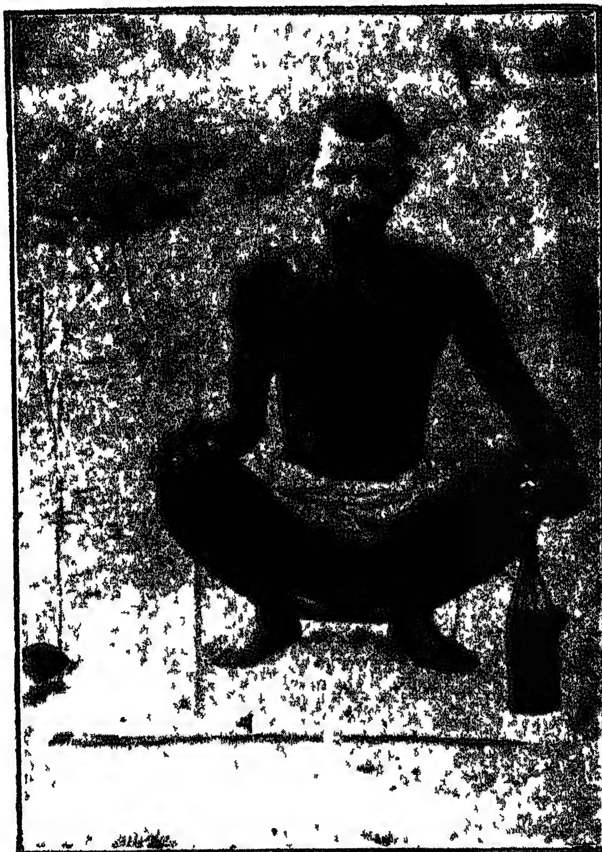
ही इन्द्रिय में धकेलना चाहिये। जब साधक इस विधि से एक छटांक जल इन्द्रिय में बिना परिश्रम भर सकेगा तब इस नली का कार्य भी पूर्ण हो जावेगा। इसके आगे साधक को नं० ४ वाली नली काम में लेनी चाहिये। इस नली को इन्द्रिय में ऐसे डाले जिसमें इन्द्रिय के अन्दर वाला मुख ऊपर को और बाहर वाला मुख पानी को कटोरी में रहे। प्रथम वायु खेंचनी चाहिये फिर जल, फिर दुग्ध, घृत, शहद और पारा खींचना चाहिये। यदि साधक को अश्वी-मुद्रा और नौली-क्रिया तथा नलों का उठाना बैठाना ठीक तरह से आता है तो वह उपरोक्त पदार्थों को बहुत ही शीघ्र खेंच सकेगा? यहां तक कि कोई साधक तो प्रथम दिन ही वायु को और २-३ दिन में जलको खींचने लगा करता है। सेर भर जल खींचने के पीछे आधा सेर दुग्ध और आधा सेर दूध के पीछे पाव भर घृत और तब आध पाव शहद और बाद में एक छटाँक पारा खींचना चाहिये। यह क्रम सर्वसाधारण के लिये उपयोगि और लाभप्रद है। यों तो सेर भर पानी खींचने वाला साधक पाव भर पारा भी खींच सकता है परन्तु इससे हानि की भी सम्भावना है। बज्रौली के लिये अश्वी-मुद्रा और नौली क्रिया आवश्यक है।

ॐ साधकों को यह बात बिल्कुल सत्य माननी चाहिये कि अश्वी-मुद्रा और नौली-क्रिया तथा पवनबस्ती के बिना बज्रौली मुद्रा होना कठिन ही नहीं अपितु असम्भव है अतः बज्रौली के साधकों का कर्त्तव्य है कि वह अश्वीमुद्रा और नौलीक्रिया को उत्तम तरह से सीख कर बज्रौली-मुद्रा में लगे।

ॐ ऊपर आप पुराने औजारों के नाप तोल प्रयोग विधि शक्ल और रबड़ की नली आदि के तरीके समझ चुके हैं अब ॐ आपको वह सुगम अनुभूत औजार और उसके प्रयोग का तरीका भी बता देता हूं जिसमें आपकी सब कठिनाइयें सुगम हो जाती हैं। यह औजार नाई के बाल भिगाने वाला फोव्वारा (EFFUSER) है। इसके प्रयोग की विधि पानी चढ़ाते हुवे चित्र के परिचय में देखिये। बताने की बात यही है कि इस औजार का काम में लाने से पहिले इसके मुख में पानी को फोवारे की आकृती में बदलने वाला जो रूक होता है उसे निकाल देना चाहिये और चित्र के अनुसार रबड़ की नली लगाकर प्रथम वायु, पश्चात् जल चढ़ाने का अभ्यास करना चाहिये। बस इसके समझ पूर्वक करने से आपका वायु और जल चढाने का कार्य सुगमता से सफल हो जायगा, मुंह से वायु और जल भरने की क्लिष्टता भी मिट जायगी और यह अभ्यास बहुत सुलभ, सुगम, सरल व कम प्रयास से हो जायगा।

● अश्वी-मुद्रा ●

ॐ अश्वी-मुद्रा उस क्रिया का नाम है जिसको घोड़ा लीद करने के पश्चात् अपनी गुदा से किया करता है। इसकी सिद्धि के लिये साधक को अपनी गुदा को बहुत आकर्षण विकर्षण (खोलना बन्द करना) करना पड़ता है। जब इस आकर्षण विकर्षण (संकोच-विकास) द्वारा साधक की गुदा बिना ही परिश्रम



नाई के फौवारे द्वारा वायु और पानी चढाया जा रहा है ।



नं० ४ की नली लगाकर वायु खींची व
निकाली जा रही है।

खुलने व बन्द होने लगे तब यह मुद्रा सिद्ध हो जाती है। अश्वी मुद्रा की दूसरो विधि यह है कि आप किसी समसूत्र सीधी जमीन पर कोई कपड़ा बिछा कर चित्त लेट कर अपने दोनों घुटनों को इतने खड़े कर लीजिये जिससे आपके दोनों पैरों की एड़ियें दोनों नितंबों के लग जाँय। ऐसे होने पर आप अपनी गुदा के अन्दर के भाग को (जो अन्दर से पोला है) बलपूर्वक बाहर की ओर धकेलो। जब धकेलने में असमर्थ हो जावो तब अन्दर की तरफ भी उतने ही बलसे खींचने की चेष्टा किया करो। इस अश्वी–मुद्रा से साधक को बहुत ही अद्भुत लाभ हुआ करते हैं। परन्तु बज्रौली की सिद्धि के लिये साधक को आकर्षण विकर्षण गुदा से नहीं अपितु इन्द्रिय से करना पड़ता है। यद्यपि इस आकर्षण विकर्षण से गुदा और लिंग एक साथ ही खींचा और खुला करते हैं तथापि साधक को बज्रौली करते समय में लिंग इन्द्रिय के खिंचाव पर ही अधिक ध्यान देना चाहिये क्योंकि बज्रौली की पूर्ण सिद्धि तब ही हुआ करती है जब साधक गुदा को बिलकुल हिलाये बिना ही इन्द्रिय को खोल और बन्द कर सकता है। इस इन्द्रियाकर्षण के सिद्ध हो जाने पर साधक उस हरेक पदार्थ को (जिसको गुदा उपस्थ के एक साथ खींचते हुए बहुत बल से खींचा करता है) इसारे मात्र से ही खींच सकता है। अतः बज्रौली के उपासकों को उपस्थाकर्षण पहिले सिद्ध कर लेना चाहिये।

❁ पवन-वस्ता ❁

ॐ यह क्रिया जो आपको बताई जा रही है वह वज्रौली के लिये बहुत अनुभव द्वारा उपयोगी सिद्ध करके लिखी है। इसके करने से साधक अपान की शुद्धि को बहुत शीघ्र प्राप्त करलिया करता है। अपान की शुद्धि और सिद्धी ही वज्रौली की सिद्धी का मूल बीज मंत्र है। जो साधक इस क्रिया को गुदा और लिंग से करना सिद्ध करलेगा वह कुछ ही दिनों में वज्रौली का सहज सिद्ध हो जावेगा। अत: साधकों को इसे अवश्य साध लेना चाहिये। विधि यह है:—पग के अंगूठे से सवाई ड्योढी मोटी और आठ-दस अंगुल लम्बी जिसमें हाथ की मध्यमा अंगुली प्रवेश कर सके इतनी पोली बढ़िया पालिस की हुई काष्ट की या अन्य किसी भी धातु की सचीकण नली, जिसके मध्य भाग में एक ऐसा छल्ला बनाया गया हो जो नली को गुदा में जाने से रोक रक्खे, लेकर घृत लगा तीन-चार अंगुल गुदा में डालकर उत्कट आसन से बैठ कर या नौली क्रिया के सदृश घुटनों पर हाथ रखकर आगे झुक कर जल वस्तीवत वायु को खींचने का अभ्यास करें। इस वस्ती के अभ्यास से आप पांच सात दिनमें ही वायु को सुख पूर्वक खींचने लगेंगे। महीने दो महीने में तो आप वायु को इतनी खीचने लगेंगे जिससे एक ही सड़ाटे (श्वास) के पूरक में आपका पेट फुटबौल वत भरकर फूलने लगेगा। इस अभ्यास के ठीक तरह से हो जाने पर आप बिना नली के भी

वायु को गुदा से पूरक, रेचक, कुम्भक कर सकेंगे। जैसे नासिका से वस्त्रिका प्राणायाम किया जा सकता है वैसे ही गुदा से भी हो सकेगा। गुदा से रेचक, पूरक, कुम्भक करने लगने ही का नाम पवन-वस्ती या अपानायाम कहा जाता है। इस क्रिया को उपस्थ से करने लग जाना ही वज्रौली का सफल रहस्य है।

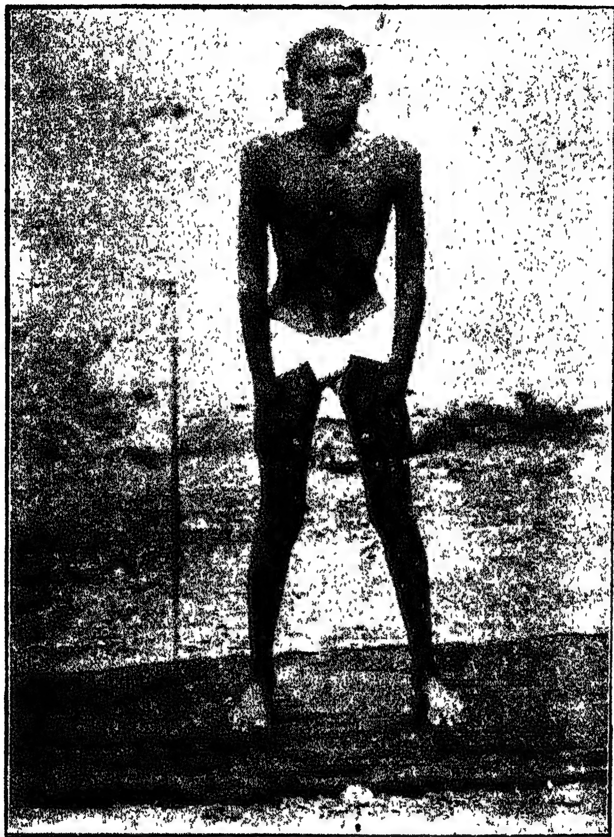
❀ फल ❀

ॐ यह क्रिया बज्रौली की सफलता की तो कुंजी है ही इसमें किसी को भी सन्देह करने की गुंजायश नहीं है। इससे पेट के मात्र रोग नाश हो जाते हैं यह अपान शुद्धिकर होने से अपान की कठोरता, उद्दण्डता, क्रूरता, विकृतता का नाश करती है। इससे सब तरह के उदर शूल, कुक्षी शूल और वायु शूलोंका नाश हो जाता है। इससे वायु गोला और अन्य किसी भी तरह की पेट की गाँठों को सहज में ही मिटाया जा सकता है। इससे पेट की नसें लचीली हो जाती हैं। रक्त शुद्धि के लिये यह क्रिया महान् अमृतमय प्रयोग है। वीर्य-वाही नसें इससे शुद्ध और सुदृढ़ हो जाती हैं। यह अपान के मात्र विकारों को नाश करके मन्दाग्निको मिटा कर क्षुधा की खूब वृद्धि करती है। जैसे बाहर की वायु के अन्दर बाहर जाने आने पर गन्दे से गन्दा मकान भी शुद्ध हो जाता है तैसे ही इस क्रिया से पेट की महान् से महान् दुर्गन्ध भी शुद्ध हो जाया करती है। इससे मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर

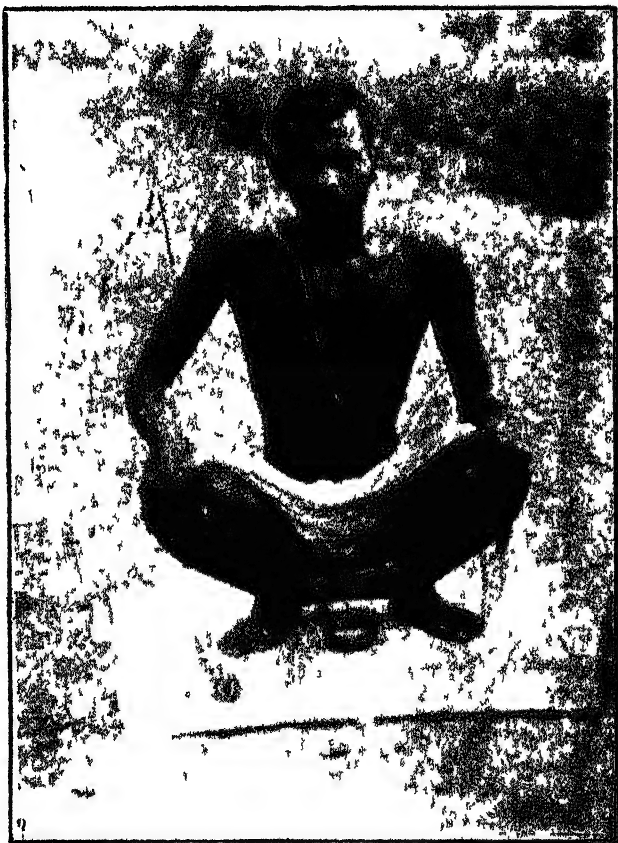
(पैक्कस सौलर) आदि चक्रों का संशोधन, उद्घाटन होकर कुन्डलनी शक्ति का ऋजुत्व एवं जागरण हो जाता है। यह क्रिया कुछ ही दिनों में प्राण अपान की एकता करके साधक के कुम्भक को बढ़ाकर प्रत्याहारादि की सिद्धी करके समाधी तक पहुँचा दिया करती है।

❀ नौली-क्रिया ❀

ॐ बज्रौली-मुद्रा के लिये उपस्थाकर्षण से भी अधिक नौली क्रिया की आवश्यकता है। सिद्धान्त से नौली-क्रिया ही बज्रौली की सिद्धि का मूल मंत्र है। नौली पेट के अन्दर के नलों को वर्तुल (गोलाकार) घुमाने का ही नाम है। नौली की विधि यह है कि प्रथम समसूत्र में सीधा खड़ा होकर आगे की ओर इतना झुकें कि जिससे आपका मस्तक ठीक गोड़ों के सन्मुख आजावे। इतना झुकने पर आप अपने दोनों हाथों को दोनों घुटनों पर रखकर पेट की समस्त वायु को नासापुट से विरेचन करके उदर को ऊपर की ओर खींचते हुए बायें दायें घुमाने की चेष्टा किया करें। ऐसा करने से कुछ ही दिनों में आपके दोनों नल पेट में उत्तम तरह से घूमने लगेंगे, नलों का पूर्ण तया घूमने लगना ही नौली क्रिया की पूर्णता है। नौली के पूर्ण हो जाने पर साधक को अपना पेट पूर्णतया अन्दर को खींच कर (उड्डीयान बन्द लगाकर) अपने दोनों नलों को बाहर की ओर फेंक कर खड़ा करने का



नौलीक्रिया.



कटोरी में जल, दूध, शहद व पारा डाल कर
नं० ४ की नली द्वारा खींचा जा रहा है।

अभ्यास करना चाहिये। जब साधक के दोनों नल हृदय से कन्द स्थान तक डंडाकार खड़े होने लगेंगे तब ही साधक को वज्रौली मुद्रा में सफलता प्राप्त हो सकेगी।

वज्रौली के लिये अश्वी मुद्रा
❀ और नौली का प्रयोग ❀

ॐ जब आप अश्वी मुद्रा (लिंगाकर्षण और नौली क्रिया) तथा दोनों नलो को पूर्णतया खड़ा करने में एक साथ सफल हो जावें तब भद्र आसन या घुटनों के बल बैठकर या कुछ आगे को झुककर खड़े २ ही अपनी इन्द्रिय में नं० ४ वाली नली डालकर दोनों नलों को खड़ा करके यदि यह पदार्थाकर्षण दोनों नलों को वायु से बिलकुल खाली करके किया जाय तो साधकों के लिये हर एक दृष्टि से लाभप्रद और खींचने में सुगम होगा। सर्व प्रथम उपस्थ के अन्दर के भाग के आकर्षण विकर्षण से वायु को खींचने की चेष्टा करें। यदि आप अश्वीमुद्रा, नौलीक्रिया और दोनों नलों का ठीक ठीक एक साथ प्रयोग करेंगे तो प्रथम दिन या एक दो दिन में ही वायु को सुगमता से खींच सकेंगे।

(ॐ के यहां लम्बी रबड़ की नली लगाकर खड़े २ कुछ आगे को झुक कर वायु, जलादि पदार्थ खीचने वाले साधक भी वर्तमान हैं) जब यह खींची हुई वायु शब्द करती हुई पेट में जाने लगेगी तब आप अपनी सफलता पर फूले न समायेंगे।

पांच सात दिन वायु खींचने के पश्चात् आप वायु को आनन्द पूर्वक खींच सकेंगे। जल खींचने के लिये आपको नली के बाहर के भाग को जलकी कटोरी आदि में डुबो कर नली को घुमाकर इन्द्री के अन्दर वाले भाग को खीचते हुए दोनों नलों को उठाना होगा। इसक्रिया के एक साथ होते ही आप जल को बहुत ही सुगमता से खींच सकेंगे। इन दोनों नलोंके बीच में एक और नल विशेष है जो लिंग से कंठ पर्यन्त लम्बा है जिसको कहीं २ नाभि स्तबन्ध के नामसे कहा है और जिसका परिज्ञान हो जाने पर साधक मुँह से पीये हुए जल को गुदा और लिंग से वैसा का वैसा ही निकाल सकता है जैसा की पीया गया था। इस नल की चर्चा गुरुगम्य होने से यहाँ जानबूझ कर नहीं की गई है। प्रथम दिन तो आप से एक दो तोला जल खींचा जा सकेगा। आगे क्रम से जलका खींचना बढाते जावें। जब आप एक सड़ाके (श्वास) मे पाव भर जल खींचने लगेंगे तब आप से पारे और शहद के सिवाय दुग्धादि द्रव्य बहुत ही सुगमता से खींचे जावेंगे।

❀ पारे के खींचने में एक अड़चन ❀

ॐ वैसे तो सेर दो सेर जल खींचने वालों को पारा खीचना कोई कठिन कार्य नहीं है परन्तु पारे को खींचते समय साधक को एक अड़चन का सामना करना पड़ता है। वह अड़चन है पारे का चाँदी की नली में जमने लगना। इस अड़चन से चाँदी की नली खराब होने लगती है जिससे साधक को पारे के

खींचने में कठिनता का सामना करना पड़ता है। यद्यपि ॐ ने उपरोक्त अड़चन को रबड़ की नली से दूर कर दिया है परन्तु रबड़ की नली से भी इस अड़चन की प्रथम बुराई ही दूर हुई है। रबड़ के अन्दर का भाग मुड़ा हुआ न होने से साधक को पूर्वोक्त पदार्थों के खींचने की कठिनता का तो सामना करना ही पड़ता है। नली का अन्दर का भाग मुड़ा हुआ होने से साधक को हरएक वस्तु खींचकर अन्दर रोकने की सुविधा अपने आपही मिल जाया करती है।

❀ कुछ अन्य बातें ❀

ॐ यद्यपि साधक उपरोक्त साधनों से पारे को पर्याप्त मात्रा में खींचने की सिद्धी को प्राप्त हो जाया करता है तथापि वह बज्रौली की पूर्णता से बहुत ही दूर रहा करता है। बज्रौली की पूर्णता में पहुँचने के लिये साधक को कुछ और बातें भी समझ लेनी चाहियें। उनमें से कुछ यह हैं:—

मनकी पवित्रता और बलिष्ठता को प्राप्त करना, अपान वायु को शुद्ध करके उसपर अपना पूर्णतया अधिकार करलेना, वीर्यग्राही स्नायुओं को शुद्ध, दृढ़ तथा बलवान बनालेना। जिस नली में प्रवेश करके वीर्य ऊर्ध्व गामी होकर अमोघत्व को प्राप्त होता है उस नली का पूर्ण परिज्ञान प्राप्त कर लेना। यह इन्द्रिय मार्ग अन्दर जाकर दो मार्गों में विभाजित हो जाता है। इन दो मार्गों में से एक मार्ग मूत्राशय में प्रवेश

करता है, दूसरा मार्ग वीर्याशय में प्रवेश करता है। बज्रौली के साधक को इन दोनों मार्गों का ज्ञान प्राप्त कर लेना परम आवश्यक है। जो साधक इन दोनों मार्गों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेता है वह मूत्राशय और वीर्याशय के रोगों को सहज ही मिटा सकता है। इन मार्गों का पूर्ण परिज्ञान हो जाने पर साधक को वीर्य के उन दो मार्गों को समझना होता है जो अधः और ऊर्ध्व मार्ग के नाम से कहे जाते हैं। इन दोनों मार्गों को समझ कर उन पर अपना अधिकार प्राप्त कर लेना ही बज्रौली सिद्धि के भौतिक और अध्यात्मिक तत्व को जान लेना है। जैसे वीर्य के दो मार्ग हैं, वैसे मूत्राशय के भी दो मार्ग हैं। इनको वाम और दक्षे मार्ग कहते हैं। इन सब बातों को समझने पर साधक को वीर्य के पतन, ऊर्ध्व गमन वीर्य के साथ मूत्र क्यों नहीं आता और मूत्र के साथ में वीर्य क्यों नहीं आता, वीर्य ऊर्ध्व गामी किन कारण से और अधः गामी किन कारणों से होता है इत्यादि बातें अपने आपही सूझने लगती हैं। (इस मार्ग का सम्बन्ध षट्चक्र और सुषुम्नणा आदि नाड़ियों से है जो सीधी शरीर के पिंड को भेद कर मस्तक में पहुंचती हैं।) उपरोक्त लिखी हुई बातों की सिद्धि किये बिना बज्रौली मुद्रा प्रदर्शन के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं है।

ॐ यदि आपने अपने मन को पवित्र और बलिष्ट बना लिया है, अपान वायु को शुद्ध करके उसको अपनी इच्छा के अनुसार चलाने की शक्ती को प्राप्त कर लिया है, वीर्यवाही

तन्तुओं को सुदृढ़ता की खुराक दे दी है तो आप अपने वीर्य को एक सड़ाटे (श्वास) में ही मस्तक के मध्य केन्द्र में पहुँचा सकते हैं। यही बज्रौली की सिद्धि का मूलमन्त्र है।



❀ मनकी पवित्रता और बलिष्ठता ❀

अपवित्र और निर्बल मन वाले साधकों को बज्रौली तो क्या किसी कार्य में सफलता नहीं मिला करती है। सफलता ही नहीं निर्बल और अपवित्र मनवाले साधकों को संसार में भी जिन्दा रहने का अधिकार नहीं होता। अतः हरेक साधक का कर्तव्य है कि वह अपने मनको पवित्र और बलिष्ठ बनावे, मनकी पवित्रता शुद्ध संकल्पों से और पुष्टता एकाग्रता एवं एक संकल्पता से ही हुआ करती है। शुद्ध संकल्प ही मनकी शक्ति को बढ़ाने वाला आहार है और एकाग्रता ही मनकी बलिष्ठता का कारण है। अतः मनको बुरे संकल्पों से बचाकर एकाग्रही रखना चाहिये। बुरे संकल्पों से मनकी शक्ती वैसे ही सड़कर नाश हो जाया करती है जैसे रसोई घर की नाली में गन्दा जल डालनेसे वह सड़जाया करती है। जैसे सड़ियल पानीसे कठोर से कठोर पत्थर सड़ने लग जाता है, वैसे ही बुरे संकल्पों से शक्तिशाली से शक्तिशाली मन भी मुर्दा होकर सड़ उठा करता है। मन की पवित्रता और पुष्टता ही सफलता की कुँजी है।



अपान की पवित्रता

ॐ अपान की सिद्धि के बिना जो साधक बज्रौली मुद्रा में हाथ डाला करता है वह साधक बज्रौली की सिद्धि को नहीं अपितु रोग और मृत्यु की सिद्धि को प्राप्त हुआ करता है। अत: बज्रौली के उपासकों को अपान को शुद्ध अवश्य करलेना चाहिये। अपान शुद्धि के कुछ उपाय निम्न लिखित हैं।

अनाभीभस्त्री का प्राणायाम, पलावनीप्रणायाम, अश्वीमुद्रा, तड़ागी मुद्रा, योनी मुद्रा, शक्ति चालनी मुद्रा, महा मुद्रा, उड्डीयान बन्ध, महा बन्ध, महा बेध, और जलबस्ती, पवन बस्ती, स्थल वस्ती तथा नौली क्रिया और प्राणायाम तत्व * नामक पुस्तिका में कहे हुए अपानायाम के मात्र प्रयोग अपान शुद्धिकर हैं।

अपान शुद्धि और सिद्धि के लिये बहुत से आसन भी लाभ प्रद हैं। जिनमें से कुछ यह हैं:—

पश्चिमोत्तान आसन सर्पासन, शुलभासन, हंसासन, पवन मुक्तासन, गर्भासन, नाभ्यासन, कूर्मासन, शंखासन, मयूरासन, उत्तानपाद आसन, उत्तान पृष्ठासन, मत्स्येन्द्रासन, मत्स्यासन, शीर्षासन योग मुद्रा आसनादि। अन्य भी पेट पर असर करने वाले आसन हैं। उपरोक्त लिखे हुये साधनों से साधक अपान को शुद्ध कर और सिद्धि करके अपने अधिकार में ला सकता है

---

* यह पुस्तक हमारे यहाँ से ।॥) में मिल सकेगी। प्रकाशक.

❀ वीर्य वाही स्नायुओं की सुदृढ़ता ❀

ॐ जिस साधक का मन शुद्ध और पुष्टता से युक्त है जो उपरोक्त अपान शुद्धि के साधनों से सम्पन्न होकर गीता के भोजन विज्ञान युक्त रस वाला (प्रवाहक) चिकना (भेदक) स्थाई बल से युक्त जिसमें वजन की अपेक्षा बल अधिक ठहरने वाला हो। "हृदय प्रिये न कि जिव्हा प्रिये" जो आयु वृद्धि, बल आरोग्यता, सुख प्रीति बढ़ाने वाले भोजन को करने वाले साधक की वीर्य वाही नसें अपने आप ही सुदृढ़ और मज़बूत हो जाया करती हैं, जो साधक मनोबल और अपान शुद्धि तथा स्नायु-बल से युक्त हो जाया करता है वो ही वीर्य बल प्राप्त किया करता है। जो वीर्य बल से युक्त होता है उसको ही वज्रौली की पूर्णता प्राप्त हुआ करती है।

बिना औजारा के पदार्थों को खींचने के साधन

ॐ इस दिव्य साधन के सिद्ध हो जाने पर आप वायु आदि पदार्थों को इन्द्रिय से खींचने में सहज ही सफल हो जावोगे। सिद्धान्त स इस साधन में सिद्ध हो जाना ही वज्रौली की गुप्तातिगुप्त सिद्धि को पाजना है।

साधन:—सर्व प्रथम आप अपने नाभि मण्डल में रहनेवाले अपान वायु को विचार और भावनाओं के नेत्रों से पकड़कर मनो विज्ञान पूर्वक अपनी मात्र शक्ति को मानसिक शक्ति में

परणित करके नाभि के चारों ओर घुमाने का अभ्यास करें। यदि आप अपनी मात्र शक्ति मनोभावों के रूप में और मन को अपनी आत्मशक्ति के रूप में संघठित कर सके तो आप थोड़े ही दिनों में अपान को अपनी रुची के अनुसार घुमा फिरा सकोगे। जब आप अपनी नाभि स्थित अपान को अपनी इच्छानुसार संचालित करने में सफल हो जावो तब विजित अपान को उसी तरह से गुदाद्वार से अपनी रुची के अनुसार बाहर फेंकने का अभ्यास करो; जैसे कुपित अपान को पाद के रूप में निकाला करते हैं। इसमें सफल हो जाने पर गुदा को बन्द रख कर इन्द्रि से वायु को बाहर फेंकने और अन्दर खींचने का अभ्यास करो। इन अभ्यासों के सफल हो जाने पर आपको वायु से पारे पर्यन्त मात्र पदार्थों को बिना औजार खींचना उतना ही सुगम हो जावेगा जितना की नोली और अश्वमुद्रा ठीक हो जाने पर औजारों से खींचना होता है।

इस दिव्य-बल को पूर्णतया प्राप्त करने पर आपको अन्दर की वायु बाहर और बाहर की वायु अन्दर लेलेना बिलकुल ही सहज हो जावेगा। यहाँ तक की आप अपनी इन्द्रिय को अन्दर और बाहर की वायु से भरकर यथा रुची फूल सकेंगे। एक साथ या फौवारे के सदृश्य थोड़ी २ निकाल सकेंगे। इससे आगे के व्यवहार की बात को बताने में मैं असमर्थ है। आध्यात्मि-कता की दृष्टि से इस साधन में सफल होने पर साधक को

अपान को प्राण में होम करने की शक्ति प्राप्त हो जाती है, वीर्य को ऊर्ध्वगामी बनाने का बल प्राप्त होकर साधक को मोक्ष मार्ग में प्रवेश करने का अधिकार मिल जाता है, जो ब्रजोली मुद्रा या बिन्दु योग का परम लक्ष सिद्धान्त है।

दूसरा साधनः—

ॐ यह वैसाही साधन है जिसको कि गुप्तातिगुप्त गुरु परमपरा की वस्तु मानकर छिपाया जाया करता है। कितने ही गुप्तपोषक कहा करते हैं कि ऐसे सुगम और सरल साधनों को पुस्तक में लिख कर श्रद्धा रहित अन-अधिकारी पुरुषों को बता कर अपने विरोधी दल को तैयार और प्रतिष्ठा को दूसरों के हाथ में बेच देना है। ऐसे साधनों को सीख कर ही बहुत से साधक नुगरे बन जाते हैं। और कहने लगते हैं कि अजी यह कौनसी सिद्धि की बात है इसे तो मैं भी कर लेता हूँ। इत्यादि

यद्यपि उपरोक्त बातें सच हैं परन्तु वे मनुष्यों के लिये नहीं पशुओं के लिये हैं। मनुष्य कभी नुगरा, कृतघ्न नहीं हो सकता है। ॐ से भी ऐसे श्वान मनुष्यों की भेंट हुई है जो ॐ से छल कर दूसरों का शिकार बन गये हैं। कोई नर्बदा तट का योगी बना तो कोई नीलगिरी गिरनार का सिद्ध बन बैठा। कोई हिमालय का समाधिस्त बना। किसी ने ॐ के पैर पर दांत जमाये परन्तु ये सब कामकामी पुरुषों की वृति है न कि मुमुक्षुओं की। किन्तु

इन थोड़े से नर पशुओं के दोषों को लेकर मात्र विश्व के मनुष्यों को किसी विद्या से वञ्चित रखना कहाँ की सभ्यता और कितने पैसों का गुरुत्व है। उपरोक्त बातों को वेही देखेंगे जो ज्ञान के भण्डारी नहीं मान के पुजारी हैं।

जिनके पेट नहीं पीठ है। जो परमार्थी नहीं स्वार्थी हैं, जिनमें उद्धारक का गौरव नहीं गुरुपन का घमण्ड है। जो व्यापक के आकाश में नहीं व्यक्तित्व की चिक में बैठ कर सिद्धियें बाँटा करते है, जिनके जीवन का लक्ष्य ही दूसरों का उद्धार है, जो अपना जीवन देकर भी दूसरों का कल्याण करना चाहते हैं उनके लिये प्रेय और श्रेय में से कुछ भी अदेय, गुप्त नहीं है। फिर ऐसे साधनों की तो कीमत ही क्या है।

इस साधन को श्रद्धा, विश्वास, धैर्य, साहस, मनोविज्ञान पूर्वक कीजिये सफलता बहुत शीघ्र होगी। आप पहले कहे हुए सर्व प्रथम साधन मूत्राकर्षण विकर्षण से या औजारों द्वारा खींचे हुए पदार्थों के आकर्षण विकर्षण से साधन को प्रारम्भ कर सकते हैं। साधन ये हैं:-जब आप अपने अन्दर खींचाव से बहती हुई मूत्र धारा को या औजारों द्वारा खींचे हुवे पदार्थों को आठ दस अंगुल बहार से अन्दर की ओर खींचता हुआ देखें और उसके खिंचाव का धक्का आपके अन्तर कोष्ट में मालुम होने लगे तब एक पानी के भरे हुए प्याले में अपनी इन्द्रिय को ऐसे रक्खें

जैसे कि पानी को छू जावे अर्थात् उसके छिद्र से हवा और पानी एक साथ मिलते रहें। इस पर स्थिति के ठीक हो जाने पर आप अपनी मूत्र धारा या औजारों द्वारा खींचे हुए पदार्थों का धारा को वेग पूर्वक चालू करके बल पूर्वक एक दम धमणी की तरह छोड़ने और खींचने का अभ्यास किया करें यदि आपकी इन्द्रिय की पवन बस्ती सिद्ध है और आप धमण क्रिया से बाहर की वायु और जल का मिश्रण करके अन्दर की वायु को छोड़ने में सफल हो गये हों तो उस दिन ही बिना औजारों के सब पदार्थों को खींच सकेंगे। अभ्यास की सुगमता के लिये प्रथम अवस्था में पानी के प्याले को इन्द्रिय के मूलसे कुछ ऊंचा रखलेना ठीक होता है। जैसे २ अभ्यास की पूर्ति होती जावे वैसे २ ही क्रम से प्याले को निचे करते जाना चाहिये।

पवन बस्ती सिद्ध साधक इस क्रियामें बहुत शीघ्र सफलता प्राप्त किया करता है। ॐ के विचार में तो इसके निरन्तर दृढ अभ्यास से आठ दस मासमें कोई भी साधक सफलता प्राप्त कर सकता है।

तीसरा साधनः—

ॐ किसी भी साधन की सत्यता की कसौटी साधक की साधना—शक्ति और तत्परता तथा शुद्ध वैज्ञानिक विचार विनिमय पर निर्भर रहा करती है। साधक की साधनतत्परता और शुद्ध वैज्ञानिक विचार विनिमय शक्ति ही सफलता की दिव्य

कुँजी है। जिस साधक ने इस दिव्य कुँजी को पा लिया होगा वही साधक बिना औजारों के साधनों में सफलता प्राप्त कर सकेगा। यह गन्धर्वनगर की बातें नहीं क्रियायोग के दिव्य अनुभवजन्य प्रयोग हैं जिनको कोई भी क्रियाशील साधक साध कर लाभ उठा सकता है। जिस साधक को इन्द्रिय से पवन वस्ति सिद्ध हो गई है वह इन साधनों को स्वत. सिद्ध ही पा सकता है। उसको इन साधनों में कोई नई या कठिन बात मालूम नहीं होगी।

तीसरा साधन यह है जब साधक औजारों से पदार्थ खींचने में बिलकुल सिद्ध हस्त हो जावे तब उसको नली द्वारा वायु को पेट में खूब अच्छी तरह से भर कर नली को इन्द्रिय से निकाल कर पेट में भरी वायु को बहुत ही शीघ्र २ बल पूर्वक इन्द्रिय से निकालना और खींचना चाहिये। इस अभ्यास के बल से आप थोड़े ही दिनों में अन्दर और बाहर की वायु को एक बना सकेंगे बाहर और अन्दर की वायु का एक हो जाना ही सफलता का रहस्य है। इन दोनों वायुओं के एक होते ही अन्दर की वायु बाहर और बाहर की वायु अन्दर अपने आप ही आने जाने लगेगी जिसको देख समझ कर आपतो कहेंगे कि पर्वत के ओले ही पहाड़ था, और आपके मित्र आपको एक योग सिद्ध महान् योगी मानने लगेंगे। कुछ परिश्रम कीजिये और फल पाइये क्योंकि 'जिन खोजा तिन पाइया'।



इन्द्रिय से खींचे जाने वाले पदार्थों की अन्वेषणा

ॐ वज्रौली से खींचे जाने वाले पदार्थों के नाम ऊपर दिये गये हैं। उनका वैज्ञानिक दृष्टि से मनुष्य जीवन और स्वास्थ्य से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनमें सर्व प्रथम खींचा जाने वाला पदार्थ वायु है जो मनुष्य जीवन और स्वास्थ्य के लिये सब से पहली वस्तु है। अन्न और जल जैसे पदार्थ के बिना बहुत या कुछ दिन तक जीवन और स्वास्थ्य रह सकता है। परन्तु प्राण-वायु के बिना जीवन और स्वास्थ्य एक क्षण के सौ वें भाग तक रहना भी असम्भव है। अतः वायु में जीवन और स्वास्थ्य का प्रथम सार-तत्व वर्तमान है। ऋग्वेद के एक मंत्र में कहा है कि हे वायु तुम आते हुये अपना औषधि लेते आवो। दूसरे एक मंत्र में फिर कहा है कि हे वायु तुम्हारे में अमृत का सागर है। अतः वायु को इन्द्रिय से पीना अमृत और सिद्धि को अपने अन्दर भरना है। अनुभव से भी वीर्य दोषी पुरुषोंके लिये इन्द्रिय से पी हुई वायु अमृत ही सिद्ध हुई है। पवित्र मनोभावों से युक्त साधकों को इस बात का अनुभव एक दो सप्ताह में ही हो जावेगा।

दूसरा खीचने का पदार्थ जल है जिसका अर्थ ही जनन शक्ति को अमोघ और ऊर्ध्वगामी बनाना है वीर्य जल का ही एक रूपान्तर तत्व है। अतः जलका वीर्य रक्षक पदार्थों में मुख्य स्थान है। मेह स्नान मेढ़ स्नान, उदर स्नान, तैरना आदि प्रयोगों से वीर्य दोष का मिटाना सिद्ध हो चुका है। जब

शरीर के बाहर के भागों पर पड़ा हुआ जल भी वीर्य दोष के लिये अचूक सिद्ध हो चुका है तो फिर शरीर के अन्दर रहने वाले वीर्य वाहक तन्तुओं पर पहुँच कर वह कितना उत्तम फल देगा इस बात को कोई भी बुद्धिमान विज्ञानवेत्ता पुरुष मान सकता है। वेद में जल की प्रशंसा पर सैकड़ों मंत्र आये हैं। बहुत से मन्त्रों में तो जल में विश्वमात्र की औषधी बनाई गई है। (अप्सु विश्वभेषजम्), जल का ही एक नाम वरुण है जिसका अर्थ ही सुन्दरता है। अतः वज्रोली द्वारा विधि पूर्वक खींचा हुआ जल ही कुछ दिनोंमें साधक के वीर्य में पुष्टता, रक्तमें तेजी आंखों में स्वच्छता लाने लगता है। अपनी प्रकृति (वात, पित कफ, के अनुसार कांच की रंगदार शीशी में भरकर और सूर्य की किरणों में रखकर उस जल को भी खीचने से बहुत लाभ हुआ है। रक्त दोषी को लाल शीशी का और वीर्य दोषी को आसमानी शीशी का जल अमृत का फल दिया करता है।

तीसरा पदार्थ दुग्ध है जिसके तुल्य इस लोक में, दिव्यलोक में और अन्तरिक्ष लोक में कोई अन्य औषधि नहीं है। जैसे कि (पय औषधीसु दिव्या हीन्तरिक्षे)। आयुर्वेद में दूध को सद्यो वीर्य कहा है। अतः दुग्ध भी वज्रौली मुद्रा के लिये अमृत मय पेय है। परन्तु वज्रौली के लिये दुग्धको बड़ी सावधानी से चुनना चाहिये।

चौथा पदार्थ घी है जो भारीपन में दुग्ध और जल से हलका और गुण में इनका मथा हुआ सार तत्व है। घृत को वेद

में चक्षु, आयु, अमृत, अजन्मा आदि कहा गया है। अतः साधकों के लिये घृत बज्रौली की मुख्य वस्तु है। इससे अपान की शुद्धी, नसों का लचीलापन वीर्य की निर्दोषता, रक्त में चमक, शरीर में हलकापन और मन में एक प्रकार की मधुर मस्ती सी आने लगा करती है। साधकों को इसको महंगा होने पर भी अवश्य काम में लाना चाहिये।

पांचवा पदार्थ शहद है। जिसका शुद्ध नाम मधु है। मधु शब्द इतना पुरातन है कि वह वेदों में भी अनेक बार आया है। इसके महत्व को मधु शब्द का अर्थ जानने वाले विद्वान् ही समझ सकते हैं। इसका आरोग्यता तथा रक्तशुद्धि से घनिष्ट सम्बन्ध है। धार्मिक कृत्यों में भी इसका प्रथम नाम आता है। सबसे महत्व की बात यह है कि इससे कल्याणमूर्ती शिव का अभीशेष भी होता है। जिसका अर्थ यह है कि मधु कल्याण को भी कल्याण देने वाला या कल्याण प्रिय पदार्थ है। मधु वनस्पतिरूप समुद्र का मथन किया हुआ अमृत (वेजीटेबिल) रस है जिसकी श्रेष्ठता में किसी को सन्देह हो ही नहीं सकता है। यह उन जन्तु विशेषों का खींचा हुआ अमर रस है जो विष में से भी अमृत को पहचान कर खींच सकते हैं। जिसको यह बुद्धि का ठेकेदार मनुष्य खींचना तो दूर रहा समझ तक भी नहीं सकता है। यह उन मक्षिकाओं की निजकी विज्ञान संग्रहित सम्पत्ति है जिसको हमारा मनुष्य समाज स्वार्थ वश

उनसे एक डाकू के सदृश लूट लेता है। वह इतना ही कह कर संतोष कर लेती है कि:—"परोपकाराय सतां विभूतय"।

कुछ भी क्यों न हो मधु सचमुच ही मधु ही है इसके महत्व को समझ कर ही हमारे योगवेत्ताओं ने इसको बज्रौली के साधन पदार्थों में लिया है जो बज्रौली के लिये बहुत ही महत्व की वस्तु है परन्तु यह चिपकना होने से साधक को कुछ खींचना कठिन अवश्य होता है अतः इसके खींचने को कुछ अभ्यासी अनावश्यक समझते हैं परन्तु ॐ के मतानुसार लाभ और बल की दृष्टि से इसको साधक अवश्य खींचें। हाँ! अभ्यास की सुगमता के लिये पहले कुछ पानी मिला कर खींच सकते हैं। यह अन्दर जाकर साधक का ज्ञात और अज्ञात बहुत लाभ पहुँचाता है।

छटा पदार्थ पारा है। पारा एक रसायनिक वृद्ध को जवान और मृत्यु से अमर बनाने वाला पदार्थ है। इसके गुणों की पूर्णता तो भगवान् शङ्कर के सिवाय कोई जान नहीं सकता। आयुर्वेद में पारे को अनन्त गुण और अनन्त शक्ति कहा है। पारे की विशेषताओं को जानने के लिये श्री आदि शङ्कराचार्य के गुरू से निर्मित पारदसंहिता देखना चाहिये। बज्रौली के लिये पारे की इससे भी अधिक विशेषता है क्योंकि बज्रौली का निर्माण वीर्य शक्ति के अमोघत्व के लिये हुआ है और पारा स्वयं वीर्य ही है। अन्तर केवल इतना ही है कि वीर्य मनुष्य के अन्तर का वीर्य है और पारा मनुष्य के बाहर का वीर्य है।

वीर्य का सजातीय पदार्थ होने से पारा बज्रौली के लिये कितना उपयोगी है इस तत्व को कोई भी वीर्य-विज्ञानवेत्ता पुरुष जान सकता है। इसके अन्दर और बाहर के भेद को मिटाकर एक रूप देना ही बज्रौली की परम सिद्धि है। मोटे तौर से समझने की बात यह है कि जो पारेरूप वीर्य को बाहर से खींचकर अन्दर रोक सकता है वह अन्दर के वीर्य को क्यों न रोक सकेगा अर्थात् पारा खींचने के पश्चात् वीर्य अवश्य रोका जा सकता है। पारा खींचने से साधक को अन्य भी बहुत से लाभ होते हैं।

ॐ के अनुभव के अनुसार साधक को सर्व प्रथम दो ढाई तोला पारा ही खींचना चाहिये अधिक से अधिक अपने वीर्य से दुगना पारा खींचा जा सकता है। साधारणतया मनुष्य के अन्दर दो से तीन तोला तक वीर्य रहता है इससे अधिक खींचने से पारा अपने वजन से साधक के अन्तर स्नायुओं को तोड़ या अंतर चर्म को फाड़ सकता है। अतः पारा खींचते समय साधक को सावधान रहने की पूर्णतया आवश्यकता है। अभ्यास की सुविधा और सफलता की पूर्णता के लिये प्रथम दिन तीन माशे पारा खींच कर ऊपर से सेर भर दूध पी लेना चाहिये। जब इस पारे को चार घन्टे हो जावे तो उसको निकाल देना चाहिये। इसी क्रम से सप्ताह में तीन माशे पारे के हिसाब से चौबीस सप्ताह या छ महीने में छ तोला पारा चढ़ाया जा सकता है। इससे अधिक बढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं। पारे की गर्मी को शान्त करने और नशों की शक्ति बढ़ाने के लिये दूध और घृत की खुराक बढ़ाते रहना

चाहिये अन्यथा पारे की उष्णता साधक के मस्तिष्क में जाकर साधक को विक्षिप्त बना सकती है। जितना कि पारा बज्रौली के लिये पूर्णता और सिद्धि का साधक है उतना ही खुराक की कमी और खींचने की अधिकता से मौत का विकराल मुख भी है। वीर्य लाभ के लिये घृत के पीछे बादाम का घृत (बादाम रोगन) भी खींचा जा सकता है। योग संध्या के लेखक ने तेल का खींचना भी लिखा है। शायद तेलाकर्षण से इन्द्रिय की नशों में बल की वृद्धि होती हो, (करड़ापन भी होता हो परन्तु ॐ को इसका खास कुछ भी अनुभव नहीं है। यह बात ॐ ने एक अनुमान के बल पर लिखी है। वह अनुमान यह है कि ॐ ने गणेश-क्रिया के लिये एक साधक को गुदा के चक्रों पर घी लगाने को कहा था उसने घी के अभाव में तेल का प्रयोग कर लिया जिससे उसके गुदा चक्र बहुत ही कठिन, करड़े पड़ गये थे। अतः तेल का प्रयोग साधक अपनी जिम्मेदारी पर ही करें।

ॐ उपरोक्त खींचे जाने वाले पदार्थों का जीवन, स्वास्थ्यरक्षा, वीर्यवृद्धि और शुद्धि—पुष्टि से कितना वैज्ञानिक सम्बन्ध है इस बात को जानने से और उन पदार्थों के वीर्य के मौलिक मुख्य केन्द्रों में पहुँचाने के लिये बज्रौली जैसी इन्जन्कसन क्रिया की कला का वैज्ञानिक दृष्टि से निर्माण देखने पर हमारे पूर्वजों के वैज्ञानिक कौशलके आगे हमें नतमस्तक होना

पड़ता है और वे स्वास्थ्य एवं जीवन-विज्ञान और वीर्य-विज्ञान को कहां तक जानगये थे इसका पता भी सहज ही लग जाता है। ॐ अपने अनुभवों के बल पर जोर दे कर कह सकता है कि यदि विज्ञानवेत्ता लोग इस पर ध्यान देंगे तो विश्व का इससे बहुत अधिक लाभ होगा।

❀ बज्रौली की पूर्णता ❀

ॐ योग-शास्त्र में वायुसे पारे पर्यन्त खींच लेना ही बज्रौली की पूर्ण सिद्धि मानी गई है किन्तु यह सिद्धि औजार से नहीं अपितु स्वयं इन्द्रिय से खींचे जाने पर ही मिला करती है। जब साधक वायु से पारे तक में इन्द्रिय को बिना औजार डुबो कर यथा रुची पारे आदि को खींच सकेगा; अपनी इन्द्रिय को काम वेदना के बिना ही केवल अन्दर और बाहर की वायु से भर सुदृढ़, कठिन बनाकर यथा रुची रख सकेगा, जब खींचे हुवे मात्र पदार्थ को सूखे के सूखे निकाल सकेगा, अर्थात् उनके संग में मूत्र, झागादि बिलकुल नहीं आवेंगे तब ही साधक के हाथ बज्रौली की पूर्ण सिद्धि लगेगी। और वह ब्रह्मचर्य के तीव्र भाव-वेग से वीर्य को ऊर्ध्वगामी बनाकर मस्तक में ले जाकर ब्रह्म बिन्दु का रूप दे सकेगा। वीर्य का स्वभाविक गुण आकर्षण और विकर्षण है आकर्षण जीवन है और विकर्षण मृत्यु। जैसे कि "मरणं बिन्दु पातेन जीवनं बिन्दु धारणं"। बज्रौली की पूर्णता में साधक आकर्षित पदार्थों को पचा भी सकता है।

❀ पूर्णता की परीक्षा और उसके कुछ उपाय ❀

ॐ बज्रौली की पूर्णता को परखने के लिये साधक को सर्वप्रथम अपने वीर्य को वीर्य के केन्द्र में ही संचालित कर के उसको वहां का वहां ही पूर्व स्थिति की भांति ही शान्त कर देना चाहिये। इस साधन में सफल हो जाने पर वीर्य संचालित कर के इन्द्रिय के मध्य भाग में लाकर वापस वीर्य को वीर्य के पूर्व स्थानमें लेजाकर पूर्वावस्थावत् पूर्ण शान्त बना देनेका अभ्यास किया करें। इस अभ्यास में सफल हो जाने पर बिलकुल पड़ते हुवे वीर्य को रोक कर पूर्वावस्था में पहुंचा कर पूर्णतया वेदना रहित बना देना चाहिये। चौथी अवस्था में आपको नीचे पड़े हुवे वीर्य को खींच कर पूर्व रूप में पहुँचा कर पूर्ण शान्त बनाना होगा। उपरोक्त चारों साधनों में सफल हो जाने पर आप अपने को बज्रौली में पूर्ण सिद्ध मान लीजिये।

❀ असली वीर्य के लक्षण ❀

ॐ ऊपर कहा गया है कि वीर्य और पारा सजातीय पदार्थ हैं भेद केवल अन्दर और बाहर का ही है। जैसे बिना बन्धन के पारे को रोकना कठिनातिकठिन है वैसे ही बिना बन्धन (संयम) के वीर्य को रोकना भी दुस्तरातिदुस्तर है। जैसे पारा अग्नि से नाश हो उड़जाया करता है वैसे ही वीर्य भी कामाग्नि के (कामुक विचारों) से नाश होजाता है। जैसे पारा अग्नि के

आधान से रहित होजाने पर मनुष्य को रोग, वृद्धापन, मृत्यु से छुड़ा देता है वैसे ही वीर्य भी कामाग्नि के आधान से रहित हो जाने पर मनुष्य को जन्म, मृत्यु, रोग से छुड़ा कर ब्रह्म में लय कर दिया करता है। अतः वीर्य पारे का ही आवान्तर स्वरूप है जिस समय साधक का वीर्य पारे जैसा रंग रूप धारण करके पारेके सम वजन होजावे तब ही साधक को अपने वीर्य का असली रूप समझ लेना चाहिये। इस वीर्य को ही हमारे पूर्वजों ने अमोघ-वीर्य, ऊर्ध्वरेतस, ओज, तेजश शुक्र, पवित्रता, कान्ति, बिन्दु, भर्गादि नामों से कहा है।

● बज्रौली की उत्पत्ति कैसे हुई ●

ॐबज्रौली की उत्पत्ति, उसका कार्यक्रम, उसमें प्रियोगित हुए पदार्थों का विज्ञान, उसका उपस्थ इन्द्रिय से सम्बन्ध सभी बातें बताती हैं कि बज्रौली का निर्माण, वीर्य के संशोधन, संरक्षण, उद्बोधन करके उसको भोग में लगाने के लिये नहीं अपितु वीर्य के उपरोक्त असली तत्व को प्राप्त करके मुक्ति पाने के लिये हुआ है। जब साधक को बज्रौली की सिद्धि वीर्य के उपरोक्त अमोघत्व को प्राप्त हो जाती है तब कुछ आगे बढजाने पर साधक के चमकीले वीर्य में एक विशेष तरह की असाधारण नवीन, शुभ्र सिन्दूर जैसी झांई बनने लगजाती है। इस झांई के पूर्णता में पहुंचने पर साधक को उससे सिन्दूर वर्ण को तीव्रतर झांई में गुलाबी रंग की शुभ्रतर किरणें बनती हुई दिखाई पड़ती

हैं। इसी ही प्रकाश के क्रम विकास से साधक का वीर्य एक दिन पूर्ण प्रकाश को प्राप्त होजाया करता है। वीर्य का इस प्रकाश में बदल जाना ही वीर्यजय, ब्रह्मलय या मुक्ति कहा जाता है। इस वीर्य की प्रथम अवस्था का नाम शुक्र (शुक्र) दूसरी का ओज, तीसरी का बिन्दु, चौथी का स्वर्ग, पांचवीं का ब्रह्मतेज, छुठी का ब्रह्म, सातवीं का अनामी अवस्था कहा जाता है। इस तत्व की पूर्ण प्राप्तिके लिये ही बज्रौली मुद्रा का निर्माण हुआ है।

बज्रौली का फल

ॐ भारत के दुर्भाग्य से कहो या विषय लोलुपता से कहो आज भारत के नवयुवक और नवयुवतियें निन्यानवे प्रतिशत (या ॐ अत्योक्ति नहीं करता है तो शत प्रतिशत) ही एक न एक प्रकार के रज वीर्य दोष से ग्रसित हैं। इस दोष से इनका बढ़ता हुआ जीवन वैसे ही घटती की ओर जा रहा है जैसे कि किसी कटने वाले वृत्त का जाया करता है। इन वीर्य दोषी युवक युवतियों को न तो जीवन का ही आनन्द मिलता है और न मौत का ही मिलता है। जैसे गली हुई लकड़ी घड़ने और जलाने के काम की नहीं रहा करती है तैसे ही वीर्य दोषी दंपति भी किसी काम के नहीं रहा करते हैं। यह रोग नहीं अपितु एक बिना अग्नि की भभकती हुई भयानक चिता है जिसमें मनुष्य की बुद्धि, स्मृति, धृति, प्रज्ञा, साहस, निर्भयता, आरोग्यता, कांति, शान्ति आदि सद्गुण जल कर भस्म हो जाते हैं। इस

महान, अभिशाप रूप अग्नि रोग से बचाने के लिये हमारे पूर्वजों ने बज्रौली मुद्रा जैसी दिव्य क्रिया का निर्माण किया है। जिसके ठीक तरह किसी अनुभवी गुरु के समीप में रह कर अभ्यास करने से मनुष्य मात्र के रोग नाश हो सकते हैं। वीर्य और रज सम्बन्धी रोगों का मिट जाना तो एक साधारण सी बात है। वीर्य दोष के मिटजाने पर साधक वीर्य के उस ऊर्ध्वगामी तत्व का प्राप्त हो जाता है, जिसके प्राप्त हो जाने पर साधक मृत्यु तक से भी छूट सकता है। शुक्र पद का अर्थ पूर्ण जवानी पूर्ण आरोग्यता, पूर्ण बुद्धि, पूर्ण स्मृति, पूर्ण प्रज्ञा, पूर्ण धृति, पूर्ण साहस, पूर्ण निर्भीकता, पूर्ण कांति तथा पूर्ण शांति आदि है। शुक्र से उठ कर वीर्य ओज पद को प्राप्त हुआ करता है। ओज का अर्थ पूर्ण बल है. जिसके बिना मनुष्य उभय लोकों में से किसी भी लोक का अधिकार नहीं पा सकता। जैसे कि (नय-मात्मा बलहीनेन लभ्यं ते) निर्बल मनुष्य को आत्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती।

इस मन्त्र के बल शब्द में शरीर बल, इन्द्रिय बल, प्राण बल, मनो बल, बुद्धि बल आदि मात्र बलों का समावेश है। शुक्र और ओज से युक्त ही पुरुष पूर्ण मनुष्य कहलाने का अधिकारी है। ओज की पूर्णता से उठ कर वीर्य बिन्दु तत्व में प्रवेश किया करता है। इस बिन्दु शब्द को योग शास्त्र ने बहुत ही महत्व दिया है। यहां तक कि बिन्दु से ही साधक मृत्युञ्जय हो जाता है। जैसे कि (एवं संरक्षयते बिन्दु मृत्युञ्जयति तत्ववित्)

इस बज्रौली योगका वेत्ता साधक इस तरह से बिन्दु रक्षा करके मृत्युको जय कर लेता है। फिर कहा है कि (यावद् विन्दुस्थिरो देहे तावत्काल भयंकुतः) जब तक देह में विन्दु सुरक्षित रहता है तब तक मृत्युका भय कहीं भी नहीं है। अथर्ववेद में भी कहा है कि (ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्यु मुपाघ्नत) विन्दु जय रूप तप से ही देवों ने मृत्यु को मार डाला। विन्दु जय से ही प्राण जय का साधन हो जाता है। जैसे कि (चले विन्दु चले प्राणे निश्चले निश्चलं भवेत्) विंदु की स्थिरता ही प्राण की स्थिरता और विंदु का चलना ही प्राण का चलना है। विंदु के स्थिर हो जाने पर ही साधक शिव पद को प्राप्त हुआ करता है। जैसे कि हे पार्वती मैं विन्दु जय से ही शिव पद को प्राप्त हो सका हूँ फिर कहते हैं कि (अहं बिंदु शिवो बिंदु) मैं विंदु और शिव विंदु है। फिर देखिये कि (अहं विंदु रजा शक्ति) विंदु मैं शिव और रज शक्ती पार्वती है। इस शिवशक्ति रज—वीर्य का एकी करण ही राजयोग कहा जाता है। जैसेकि (रजसो रेतसो योगात् राज-योग इतिस्मृतिः) रजरूपी पार्वती और रेत रूपी शिव के संभोग से ही राजयोग सिद्ध हुआ करता है। इस रज रूप पार्वती का स्थान नाभि और बिन्द का स्थान मस्तक का मध्य भाग कहा है। इस रजका वर्ण सिन्दूर और बिन्दु का वर्ण श्वेत कहा है। इस रज रूपी पार्वती को नाभि से उठा कर मस्तक के मध्य केन्द्र में शिव से मिला देना ही योग सिद्धि या बज्रौली सिद्धि का सफल रहस्य है। कहां तक कहें विंदु ही ॐ का ईश्वरत्व है।

उर्ध्वगति का दिव्य संकेत है। विंदु ही गणित का तात्विक बीज है। विंदु ही सोभाग्यवती का सौभाग्य है। तभी तो योग शास्त्र में कहा है कि (सिद्धे विन्दौ महाशक्ति कि न सिध्यति भूतले) हे पार्वती विंदु के सिद्ध हो जाने पर पृथ्वी में साधक को क्या २ सिद्ध नहीं हो सकता है अर्थात् सब कुछ सिद्ध हो जाता है (न तस्य रोगो न जरा न मृत्यु) विंदु सिद्ध साधक को रोग, बुढ़ापा, मृत्यु आदि कुछ भी नहीं छू सकते हैं।

कुछ भी क्यों न कहो विंदु मनुष्य और ईश्वर के बीच का द्विभाषिया है। जो ईश्वर की बात साधक को और साधक की बात ईश्वर को समझाया करता है। ईश्वर के सम्पर्क मे पहुंचाना ही बज्रौली का सच्चा अर्थ है। योग शास्त्र में कुछ इसके सिवाय भी लिखा हुआ है। वह है स्त्री पुरुष का समागम। ॐ के अनुभव में मोक्ष दायक साधन को स्त्री समागम जैसे तुच्छ विषय मे लगाना कितनी बड़ी तुच्छता है। इस बात को कोई भी समझदार पुरुष समझ सकता है। यदि इतना समझ कर भी उपरोक्त गलती से साधक अपने को नहीं बचा सकता हो उसको निम्न लिखित बातें अवश्य जान लेनी चाहियें।

जब तक बज्रौली पूर्णतया सिद्ध न हो जाय तब तक गृहस्थी भी स्त्री समागम नहीं कर सकता। स्त्री समागम तो क्या बल्कि तत्सम्बंधी विचार भी नहीं लाना चाहिये। स्त्री समागम और तत्सम्बन्धी विचारों से वीर्य का जीवन—सार नष्ट होता रहता है। बज्रौली के पूर्णतया सिद्ध होजाने पर साधक को

आपन को पूर्ण सिद्धि प्राप्त हो जाती है। जिससे स्त्री समागम ता साधक को एक तुच्छातितुच्छ बात नजर आने लगती है। इस से वह वीर्य के बिना संचालित किये काम वेदनासे रहित स्थिति में ही इन्द्रिय को बाहर या अन्दर की वायु से भर कर रबड़ की नली की तरह कठिन बना सकता है। इस मैथुन से साधक को वायु के इन्द्रिय में रोकने के सिवाय और कोई हानि न होकर दिन प्रतिदिन बल का विकास हो बुका करता है। इस मैथुन के सिद्ध हो जाने पर ही साधक स्त्री के रज को आकर्षण कर सकता है। वीर्य के पारे की सदृश्यता में आजाने पर ही साधक स्खलितता के दोष से छूट जाया करता है। यदि इसी वीर्य को साधक पारे की सदृश बंध बनाले तो फिर उसको शक्ति का कहना ही क्या है। पारा वीर्यस्थ मन को एक अपूर्व वस्तु है। किसी विज्ञान विशेष निर्मित पारे की गोली मुख में रख कर मैथुन करने से जब तक वह मुख में से नहीं निकल जायगी तब तक स्खलन हो ही नही सकता है। अतः जैसे २ वीर्य पारे की सादृश्यता में पहुँचता जाता है। तैसे ही तैसे साधक स्खलन के दोष से मुक्त हो जाता है।

❁ अनुभूत फल ❁

ॐ ऊपर जो कुछ भी कहा गया है वह शास्त्र और अनुभव का मिश्रण है परन्तु अब जो कहा जाता है वह सब अनुभव की ही बातें हैं। इन अनुभवजन्य बातों के बल पर ही यह निबन्ध

लिखा गया है। बज्रौली के जलादि प्रयोगों से मूत्राशय और वीर्याशय को बड़ी सुगमता से धोकर सफा किया जा सकता है। तथा उनके ठीक प्रयोगों से वीर्य के मात्र दोष नाश हो जाते हैं। इस रोग के सभी रोगियों को इन प्रयोगों से आनन्द भूत सफलता मिली है। स्वप्नदोष तो बज्रौली के प्रयोगों से कुछ ही दिनों में मिटजाता है। रक्त शुद्ध होकर उसमें कान्ति आने लगती है नेत्र निर्मलता को प्राप्त होजाते हैं। उदर के मात्र विकार मिटकर क्षुधा की अत्यधिक वृद्धि हो जाती है। अतः बज्रौली के साधकों को खाने पीने का पूर्ण प्रबन्ध रखना चाहिये। मल और मूत्र की बद्धता तो बज्रौली के अभ्यासी को कभी छू तक नहीं सकती है। शायद इन प्रयोगों से बहुमूत्र (Diabetes) का रोग भी मिट जाता है परन्तु इसमें ॐ का कोई निजी अनुभव नहीं है। इन बातों की जांच करना शरीर शास्त्र के ज्ञाता और चिकित्सकों का काम है। साधक को किसी अनुभवी गुरु के समीप में ही प्रयोग करना चाहिये अन्यथा लाभ के सिवाय हानि की सम्भावना अधिक है।

❀ स्तम्भन और बज्रौली ❀

ॐ की इस निबन्ध में कामुकता और सिद्धि से सम्बन्ध रखनेवाली बातें लिखने की इच्छा बिल्कुल ही नहीं थी क्यों कि ॐ इन दोनों बातों को योग मार्ग के सबसे बड़े विघ्न मानता है। इनमें कामुकता भौतिक और सिद्धि दैविक विघ्न

है। परन्तु इस निबन्ध के पूर्ण लिखजाने पर एक ऐसा कारण आ उपस्थित हुआ जिससे ॐ इस विषय पर कुछ लिखने को बाध्य होगया। वह कारण था एक जिज्ञासु का यह पूछना कि क्या बज्रौली का सन्तानोत्पत्ति और स्तम्भन से भी कुछ सबन्ध है। ॐ ने कहा कि बज्रौली के भोग शब्द का भौतिक तत्व ही सन्तान पैदा करनेके आध्यात्मिक तत्वको पाजाना है। इस प्रजनन तत्व के भौतिक स्वरूप का नाम ही शुद्ध शास्त्रीय भाषा में स्तम्भन, अमोघ, अव्यर्थ तत्व है। जो लोग स्तम्भन का अर्थ कामुकता की तृप्ति या मैथुन की दृढ़ता लेते हैं वो शास्त्रीय भाषा का दुरुपयोग और अपने जीवन, चरित्र, सभ्यता, संस्कृति की हत्या करते हैं। उक्त जिज्ञासु ने कहा कि मैंने अमुक बज्रौली के अभ्यासी से इस विषय पर चर्चा की थी उसने कहा कि आप जानते हैं मैं बज्रौली करता हूँ। बज्रौली से स्तम्भन नहीं होता है और होता है तो बहुत कम होता है। ॐ ने कहा एक ओर तो वह अपने को बज्रौली का सिद्धहस्त होने का फतवा बांट रहे हैं और दूसरी ओर बज्रौली के भौत्यिक सिद्धान्त के विरुद्ध ऐसी बेहूदी अनर्गल बात कह रहे हैं। इस सज्जन के मतानुसार तो बज्रौली और उसको बतलाने वाले यौगिक ग्रन्थ तथा उसके प्रवर्तक बज्रौली (बन्दु) योग के पूर्ववेत्ता सब ही झूठे, ढोंगी, जनता की आंखों में धूल डालने के साधन है। ॐ ने जितने भी ग्रन्थों में बज्रौली का विधि विधान पढ़ा है उन सबमें बज्रौली को बिन्दुजय, स्तम्भन, अमोघ, अव्यर्थवीर्य बनाने के

लिये ही बताया है। इसके प्रमाण में ॐ अपनी परिस्थिति के अनुसार इस विषय की सब बातें पाठकों को बताकर कुछ थोड़े शब्द ही उद्धृत करता है। जैसे कि वज्रौली की पूर्णता में साधक स्खलित वीर्य को ऊर्ध्व कर सकता है। स्त्री के रज को खींच कर अपने स्तम्भन बल से वीर्य के रूप में परिणत कर सकता है। यहाँ तक कि पूर्ण सिद्ध, स्त्री के प्राण और पूर्ण सिद्ध पुरुष के प्राणों तक को भी खींच कर अपने प्राण में प्राण, वीर्य में वीर्य, मन में मन को स्तम्भन कर सकते हैं इत्यादि। इतना ही नहीं परन्तु जो मनुष्य कुछ थे ही नहीं उनको वज्रौली के साधन से ॐ ने सब कुछ बने हुए देखा है। उपरोक्त प्रमाणों को देखकर कोई भी बुद्धिमान पाठक समझ सकता है कि उक्त वज्रौली द्वारा का कथन कितना सत्य है तथा वह वज्रौली को किस लिये करता है। परन्तु उपरोक्त प्रमाणों के होते हुवे भी ॐ पाठकों को सावधान कर देता है कि वह अपने विचारों को अकामुक बनाये बिना और किसी सच्चे वज्रौलीवेत्ता गुरु के मिले बिना उपरोक्त स्तम्भन के लिये वज्रौलीमुद्रा को कभी न छूवे। क्योंकि कामुकता के विचारों के आघात से शुद्ध से शुद्ध वीर्य भी दूषित होकर नाश होने लगता है। उसमें यत्किञ्चित भी आघात सहने की शक्ति नहीं रहा करती है जैसे कमजोर वस्त्र टांका देते हुए भी फटता रहता है, तैसे ही दूषित वीर्य भी कामुक विचारों के युक्त होने से मूत्र के साधनों से भी नाश की ही ओर प्राप्त होता है।

❀ वज्रौली और प्रजनन तत्व ❀

ॐ उत्तम सन्तान बनाने के लिये उत्तम प्रजनन तत्व की आवश्यकता होती है। उत्तम प्रजनन तत्व को योग शास्त्रों में गौरीशङ्करात्मक कहा है। गौरी-रज का वर्ण सिन्दूर और शिव-

बिन्दु का वर्ण श्वेत पारदवत् कहा है। इसको ही योग में ब्रह्म बिन्दु और ब्रह्म बीज नाम से कहते हैं। इसी तत्व को भगवान् गीता में अपना सनातनबीज स्वरूप बताते है जैसे कि 'बीजं मां सर्व भूतानां विधि पार्थ सनातनम्' इस तत्व से सन्तान बनाना कामोपासना नहीं अपितु भगवदुपासना कहा जाता है जैसे कि 'प्रजनश्चास्मिकन्दर्प' धर्म विरुद्ध भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ आदि २। जिस प्रजनन तत्व क्रिया में मेरी धारणा तत्व को ही सन्तान के रूप में बदला जाता है वह प्रजनन क्रिया का काम नहीं अपितु मेरे प्रजननस्वरूप का साक्षात्कार करना मेरे प्रजननतत्व की उपासना है इस उपासना तत्वके मौलिकस्वरूप का साक्षात्कार करना ही वज्रौली मुद्रा के भोग शब्द का शुद्धार्थ है। इस सनातन ब्रह्म बिन्दु, ब्रह्म-बीज का उद्गम स्थान योगशास्त्र में कथित ब्रह्म-नाड़ी है। वज्रा नामक नाड़ी में पहुँचने पर साधक को इस तत्व के मौलिक स्वरूप का बोध हो जाता है। वज्रा में पहुंचाने वाली होने से ही इस मुद्रा का नाम वज्रौली पड़ा है। ब्रह्म नाड़ी गत बिन्दु का ब्रह्म में आने से वज्र, अमोघ अन्यथा सुषुम्णा में आने से केवल वीर्य नाम पड़ा करता है। यही सन्तानोत्पादक तत्व का स्वरूप है। इस से नीचे वाले वीर्य से प्रथम तो गर्भ ही नहीं रहता है, रह गया तो पेट में ही मिट जाता है, पेट में नहीं मिटा तो जन्म लेते ही मरजाता है। यदि इन सर्व आपत्तियों से बचगया तो अल्पजीवी होता है, यदि किन्हीं कारणों से दीर्घ-जीवी भी हो गया तो रोगी, शोकी जीवन बिताया करता है। अतः हर एक साधक का कर्त्तव्य है कि वह अपने वीर्य को सुषुम्णा से नीचे न उतरने दे क्योंकि इससे नीचे वाले वीर्य में प्रजननतत्व नहीं अपितु मनुष्य जीवन का महान् पाप रहता है। सुषुम्णा के वीर्य से मनुष्य, वज्रा के वीर्य से महापुरुष, चित्रा के वीर्य से देव, मनुष्य उत्पन्न हुआ करते हैं। यही सन्तान विज्ञान की

कसौटी है। इसको ही योग में गौरीशङ्कर, ब्रह्मबिन्दु, ब्रह्मबीज के नाम से और गीता में धर्मानुकूल, प्रजनन तत्व, सनातन, बीज के नाम से कहा गया है। इस प्रजनन तत्व में मन, प्राण, वीर्य ईश्वरात्मिक तत्वों का एक कीरण बना हुआ रहा करता है। जिन साधकों को इस भगवान् तत्वस्वरूप गौरीशङ्करात्मक सनातन बीज़ की प्राप्ति होजाया करती है वे एक प्रकार के योगी ही हुआ करते हैं। सुषुम्णा वाले रज वीर्य से गर्भाधान रहते समय साधकों को मेरुदण्ड के मज्जातन्तुओं में एक विशेष तरह की अलाभारण गुदगुदी सी हुआ करती है। वज्रा के रज वीर्य से गर्भाधान रहते समय चक्रों के मध्य केन्द्रों में एक विचित्र तरह की विद्युत की क्षणिक चमक का साधकों को साक्षात्कार हुआ करता है। चित्रा के रजवीर्य से गर्भ रहते समय साधकों के चक्रों के अन्दर भाग में विद्युत गति (current) का प्रकाश इतना तेज हो जाया करता है कि वह बिजली के लट्टुओं की सदृश प्रकाश उगलने लगा करते हैं। उसके प्रकाश के प्रवाह से कुछ देर के लिये साधक भी प्रकाशमय हो जाया करते हैं। जिन साधकों का यह बीजात्मक प्रकाश तत्व ऊर्ध्व प्रयाण करता हुआ सा दीखा करता है उनके लड़का और जिनके नीचे की ओर बहता हुआ सा दीखा करता है उनके लड़की हुआ करती है। उपरोक्त गर्भाधान का साधकों को उसी क्षण गर्भ रहने का परिज्ञान हो जाया करता है।

उपरोक्त गौरीशङ्करात्मक सनातन बीज का वज्रौली द्वारा उत्तम साधक किसी वज्रौली के तत्ववेत्ता गुरु के पास साधन कर तीन वर्ष में प्राप्त कर सकता है। इस ही की पूर्ति के लिये हमारे पूर्वाचार्यों ने निम्न लिखित ब्रह्मचर्य रख कर सुषुम्णागत रजवीर्य को और २५ वर्ष स्त्री ३६ वर्ष पुरुष अस्खलित वीर्य

को रख कर वज्रागतवीर्य को तथा ३६ वर्ष स्त्री और ४८ वर्ष पुरुष अस्खलित ब्रह्मचर्य को रख कर चित्रागत रज वीर्य को पूर्व कालीन स्त्री पुरुष प्राप्त किया करते थे। क्या भारत को अब भी कभी ऐसे ब्रह्मचर्य का पालन करने का सौभाग्य प्राप्त होगा?

ऊर्ध्वगति और वज्रौली

ॐ मनुष्य की नैसर्गिक रचना ही उस तत्व से हुई है जिसमें स्वभाव से ही अधः और ऊर्ध्वगति रहती है। जिन मनुष्यों में अधोगति के भाव उभर, सामने या ऊपर आजाया करते हैं वे अधोगामी और जिनमें ऊर्ध्वगामी तत्व उभर सामने या ऊपर आजाया करते हैं वे ऊर्ध्वगामी होते हैं। इस बात को गीता में भी कहा है कि 'हे अर्जुन जो मनुष्य सत्व में स्थित हैं वे ऊर्ध्वगामी होते हैं, जो रज में स्थित होते हैं वे मध्य में रहते हैं और जो तम में फँसे रहते हैं वे अधोगामी होते हैं' उस अधो और ऊर्ध्वगामी पदार्थ का नाम है 'बिन्दु'। इस बिन्दु का अधोगामी अंश अन्न जल आदि भौतिक पदार्थों से और ऊर्ध्वगामी अंश आत्मसौर से बनता है। इस बिन्दु तत्व के उपरोक्त दोनों तत्वों से ही मनुष्य का अध्यात्मिक और अधिभौतिक जीवन निर्माण, धारणा और संहार हुआ करता है। योग में इस बिन्दु को बहुत ही महत्व की वस्तु माना है। पाठकों के हितार्थ बिन्दु तत्व के अधो व ऊर्ध्वगामी तत्वों का विवेचन किया जाता है।

इस अधोगामी तत्व से इन्द्रिय और ऊर्ध्वगामी तत्व से निरिन्द्रिय होता है। इसके सइन्द्रिय भाग को वीर्य, मन, प्राण, अपान, समान व व्यान कहते हैं। और निरिन्द्रिय भाग को ऊर्ध्वरेतस्व, उदान, धनञ्जय व देव मन कहते हैं। इनमें से अपान, शरीर के नीचे के भाग में रह कर उसकी व्यवस्था

करता है। समान इधर उधर पड़ने से रोकता है। प्राण जीवन तत्व के मध्य बिन्दु को स्तम्भन किये रहता है और व्यान इन सबकी व्यापक व्यवस्था को स्थित रखता है। दूसरा आध्यात्मिक तत्व उदान और धनञ्जय निरिन्द्रिय तत्व है। इन दोनों पदार्थों के अधोगति वाले भाग मिल कर कण्ठ से नीचे के शरीर और इन्द्रियों के कार्य को व्यवस्थित रूप से चलाते हैं। उदान और धनंजय मिल कर निरिन्द्रिय मस्तिस्क, निरिन्द्रिय रोम क्रिया और निरिन्द्रिय परलोक मार्ग का सञ्चालन किया करते हैं। इन शरीर गत तत्वों को और मस्तिस्कगत तत्वों की क्रियाओं का ठीक तरह से मिल कर होते रहना ही जीवन और सम्बन्ध विच्छेद का नाम ही मृत्यु कहा जाता है। इन दोनों की तात्विक कड़ी को मिलाये रखना ही वीर्य और ऊर्ध्वरेतत्व का कार्य है। इस कड़ी को जोड़े रखने में ही देव, मन की आवश्यकता हुआ करता है। जिस साधक का यह बिन्दु त्रय का आदिभौतिक भाग अपने अस्तित्व सहित अध्यात्म भाग में जज्ब हो कर एकत्व को प्राप्त हो जाता है वह साधक ऊर्ध्वगामी और जिस साधक का अध्यात्म भाग अपने अस्तित्व सहित अधिभौतिक एकता को पा लेता है वह अधोगामी हुआ करता है। जो साधक उपरोक्त बिन्दुत्रय के तेजोंश की उपासना करते हैं वे ऊर्ध्वगामी और मृत्युञ्जय हो जाया करते हैं और जो उपरोक्त बिन्दुत्रय के तमोंश की, भौतिक तत्व की उपासना करते हैं वे अधोगामी और मृत्यु को प्राप्त हुआ करते हैं। इस तत्व को योगशास्त्र ने दो वाक्यों से बिल्कुल ही स्पष्ट कर दिया है कि "मरणं बिन्दु पातेन जीवनम् बिन्दु धारणे। चले बिन्दु चलेत प्राण: निश्चले निश्चलं भवेत्"॥ वीर्य का ऊर्ध्वगामी तत्व ऊर्ध्वरेतत्व और प्राण का ऊर्ध्वगामी तत्व धनञ्जय उदान और मन का ऊर्ध्व गामी तत्व देव कहा जाता है। इन तीनों के धारण का नाम

जीवन और पतन का नाम मृत्यु है। ऐसे ही यहां चले का अर्थ अधोगति जन्म मृत्यु के प्रभाव से और निश्चले का अर्थ ऊर्ध्वगति, प्राणायाम, ब्राह्मी स्थिति या पूर्णस्थिरता है जिसमें जाकर बिन्दु प्राण व मन का बिल्कुल ही उतक्रमण नहीं हुआ करता जैसे कि "तस्य प्राणा न उतक्रामंति" उसके प्राण ब्रह्मरूप होने से नीचे की ओर उतक्रमण नही होते हैं। गीता अध्याय १४ में लिखा है कि रजोगुण प्रधान होने से मनुष्य जन्म मिलता है सतोगुण की ओर बढ़ने लगना ऊर्ध्वगति 'ऊर्ध्वा कृष्णे' कहा जाता है और तमोगुण की ओर बढ़ने लगना अधोगति अधः पतन कहा जाता है।

"ॐ" उपरोक्त विवेचन से आपके समझ में आगया होगा कि आपके वीर्य, प्राण, मन में अधोगति और ऊर्ध्वगति वाले नैसर्गिक तत्व वर्तमान हैं। जो साधक अधोगति के तत्व को संयम बल, ऊर्ध्वगामी तत्व से दबा कर ऊर्ध्वगामी तत्व को उभार सकता है वह साधक ऊर्ध्वगति को सहज ही प्राप्त हो सकता है। परन्तु यह सब होगा तब ही जब साधक बिन्दुत्रय के उपरोक्त ऊर्ध्वगामी तत्व पर अपना पूर्णतया अधिकार कर लेगा। इसके आधार पर ही योग शास्त्र में आकाश गमन आदि सिद्धियों की नींव रक्खी गई है। जैसे कि पातंजलि योगदर्शन विभूति पाद ३९ वाँ मन्त्र * में कहा है कि जब प्राण, वायु, अपान, समान, व्यान को उदान द्वारा जय कर लिया जाता है तब साधक जल, कीच, कांटे आदि पर चल सकता है फिर सूत्र

---

१ गीता १४ अध्याय का श्लोक—

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः॥ १८॥

*उदानजयाज्जलपंककण्टकादिष्वसंग उत्क्रान्तिश्च॥

४२ × में कहा है कि शरीर और आकाश के एकत्व संयम से साधक सड़ कराडे की रुई के समान हल्का होकर आकाश में उड़ सकता है।

अतः शास्त्रों में भी ऐसे कुछ उदाहरण मिलते हैं, जैसे कि भीम के फेंके हुए हाथी आकाश में उड़ने का वर्णन आदि। ऊपर कहा गया है कि उदान वायु मरण के अनन्तर मनुष्य के सूक्ष्म शरीर को ऊपर के लोक में लेजाने का कारण बनता है और कभी कभी शरीरगत धनञ्जय वायु ब्रह्माण्डगत धनंजय वायु की सहायता से मुर्दे को खड़ा कर दिया करता है। इन दोनो वायुओं को निकालने के लिये ही हिन्दु धर्म में कपाल क्रिया की जाती है। परन्तु ध्यान ये रखना चाहिये कि ये सब वर्णन बिन्दुत्रय के ही उदान से सम्बन्ध रखते हैं। काम और मनोजयी हुए बिना कोई साधक उदान जयी नहीं हो सकता है। जिसको वीर्य की भाषा में ऊर्ध्वरेतस्व कहते हैं उसको ही प्राण की भाषा में उद्दान कहते हैं। साधक काम जयी होने से ऊर्ध्वरेतस्व और उद्दानजय के तत्व को प्राप्त कर सकता है। इन दोनों की विजेय सहायक आन्तरिक शक्ति का नाम ही

× कायाकाशयो स्सम्बंध संयमाल्लघुतूल समापत्तेश्चाकाश गमनम्॥

नोट—उपरोक्त सूत्रों में बताई हुई सिद्धियें आदि आजकल के योगियों की जुबान में ही मिलती हैं कार्य में नहीं। हां कहीं २ बाजारु बाजीगर अग्नि आदि पर चलने के चुटकले अवश्य दिखा दिया करते हैं जिनका सम्बन्ध योग से कुछ भी नहीं होकर चाल बाजी से ही अधिक हुआ करता है यही कारण आज के वैज्ञानिक समय में सिद्धियों के अमजाल को बहुत से क्षेपक, फिजूल, विज्ञान प्रकृति के विरुद्ध कहने लग गये हैं। पाठकों को इन पतनकारी बातूनी सिद्धियों में न फंस योग का परमार्थिक तत्व खोजने की चेष्टा करनी चाहिये।

मन–बिन्दु है। सिद्धान्त से वीर्य, प्राण, मन एक ही तत्व के तीन नाम हैं। जैसे कि "इति बिन्दु प्रथम् भवेत्" उदान स्वरूप वीर्यबिन्दु और अपान मूलाधार और स्वाधिष्ठान चक्र में रहते हैं। मणिपुर चक्रमें वीर्य का पूषण और प्राण का समान तत्व रहते हैं शुक्र और व्यान व्यापक चक्रमें रहते हैं। इन चारों शक्तियों को जानने के पश्चात साधक सकू कण्डे से भी हल्का हो सकता है। यहाँ बिन्दु योग की दृष्टि से प्राण और मन बिन्दु का भी वीर्य बिन्दु में ही समावेश हो गया है।

❋ समाधी और वज्रौली ❋

ॐ यहां समाधी की समालोचना नहीं करनी है यहां तो इतना ही कहना है कि बिन्दु योग ही समाधी का बीज मन्त्र है। बिन्दु योग के सिद्ध हुए बिना समाधी को पाना इतना ही दुस्तर है जितना कि प्राण के बिना प्राणी, सूर्य के विना प्रकाश होता है। योगशास्त्र मे कहा है कि बिन्दुयोग ही प्राणायाम का तत्व प्रत्याहार का बीज, धारणा का सार, ध्यान की कुँजी, समाधि का अमर रस है। बिन्दुयोग की ही सिद्धि इन सब की सिद्धि है और बिन्दुयोग की ही असिद्धि इन सब की असिद्धि है। बिन्दुयोग के सिद्ध होते ही साधक जीव मे शिव हो जाता है। महादेव कहते हैं कि हे पार्वती 'बिन्दुयोग को ही सिद्ध करके मैं शिव तत्व को प्राप्त हुआ हूँ।' योगी गोरख भी कहते हैं कि 'जो जाने पारे (वीर्य) का भेव (भेद), वह योगी नहीं साक्षात् देव।' जभी तो शङ्कर कहते हैं कि –'सिद्धेबिन्दु महामन्त्रे किं न सिध्यन्ति भूतले' बिन्दुयोग के सिद्ध होते ही मात्र योग स्वयं ही सिद्ध हो जाते हैं। उनके लिये फिर कुछ अन्य साधन की आवश्यकता नहीं रहती है। इस योग के अनेकों उदाहरणों में

से प्रातः स्मरणीय पितामह भीष्म का ज्वलन्त उदाहरण है। इस योग के साधनार्थ साधक को सर्व प्रथम यह समझना चाहिये कि प्राण और मन वीर्य के ही दूसरे नाम हैं। वीर्य का ब्रह्मबिन्दु, प्राण का जीवनप्रकाशबिन्दु और मनका सङ्कल्पबिन्दु नाम है। इन तीनों के जय को ही प्राणायाम, प्रत्याहार, एक तत्व को धारणा ध्यान और इनके ब्रह्ममें लय करदेने को ही समाधी कह सकते हैं। इस समाधी को भगवान ने गीता में चार भागों में बांटा है। प्रथम शरीर की शून्यता और इन्द्रियों की सजीवता दूसरी शरीर और इन्द्रियों की शून्यता और मनकी सजीवता, तीसरी शरीर, मन, इन्द्रिय की शून्यता और बुद्धि की सजीवता, यहां तक की समाधी ही संप्रज्ञात समाधी कही जाती है। चौथी समाधी में शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि सब कुछ ही लोप होजाती है। इस समाधी वाले योगी के प्राणों का फिर किसी अवस्था में उत्क्रमण नहीं होता है। प्रथम समाधी में साधक के वही अवयव ठण्डे पड़ा करते हैं जिनको ब्रह्मा ने आत्म विमुखी और बहिर्दर्शी बनाया है। इस अवस्था में साधक के ईड़ा पिंगला गत चक्रों का भेदन और तद्गत कुण्डलनी शक्ति का जागरण हो जाया करता है। दूसरी समाधी में साधक की ज्ञानइन्द्रियों का लय और शुष्मणागत चक्रोंको भेदन तथा तद्गत कुण्डलनी शक्ति का स्फोट हो जाता है। इस अवस्था का नाम ही प्रत्याहार कहा जाता है। तीसरी समाधी में साधक के वज्रागत चक्रों का भेदन और तद्गत कुण्डलनी शक्ति का उद्बोधन हो जाता है।

चौथी समाधी में साधक के चित्रा के चक्रों का भेदन और तद्गत कुण्डलनी के अन्तिम शिवात्मक प्रकाश का दर्शन हुआ करता है। चित्रा में ही ईड़ा, पिंगला, शुष्मणा, बज्रादि नाड़ियों का अस्तित्व रहता है। चित्रा में पहुंचते ही इनका अस्तित्व मिटजाता है अर्थात् यह गति रहित हो जाती हैं। जैसे चित्रा में पहूंच कर ईड़ादि नाड़ी अपना अस्तित्व खो बैठती है वैसे ही चित्रा में पहुंच कर प्राण, मन, बिंदु भी अपना अस्तित्व खो देते हैं। चित्रा में जाकर न तो नाड़ी नाड़ी ही रहती है; न प्राण, मन, बिन्दु ही रहते हैं। यहां पहुँचने ही यह सब एक आत्मरेखा विद्युत् प्रकाश आनन्द लहरों में परिवर्तित हो जाते हैं। इस आत्म रेखा को विद्युत्-प्रभा, आनन्दलहरी का नाम ही ब्रह्मनाड़ी कहा जाता है। इस दिव्य नाड़ी में पहुँचते ही "ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" के पद को प्राप्त हो जाता है। इस तात्विक समाधी के तत्व में पहुंच कर फिर योगी का उत्थान नहीं हुआ करता है। उसकी मात्र अवस्था एक ही तरह की हुआ करती है। यह तो रही शास्त्रीय समाधी की बात आज कल कुछ ऐलची समाधी भी लगाई जाती है। उनमें से प्रथम समाधी का स्वरूप ऐसा होता है। जैसे कि मोटर के मात्र अवयव बन्ध होने पर भी उसका खास यन्त्र चालू रखा जा सकता है वैसे ही इस समाधी में साधक अपने मात्र अवयवों को बन्द करके हृदय की सूक्ष्म तन्त्री को चालू रखा करता है। जिसकी गति को डाक्टर लोग भी समझने में

असमर्थ रहा करते हैं। यह समाधी उपरोक्त समाधी से कुछ मिलती जुलती सी है। दूसरी समाधी में साधक अपने चारों प्राणों को धनंजय नामक उप प्राणों में लय करके लगाया करता है। अर्थात् वह अपने मात्र प्राण प्रवाहों का धनंजय में बदल कर रोम कूपों से आनन्द पूर्वक श्वास प्रश्वास लेता रहता है। यह भी डाक्टरों की पहुँच से परे है। तीसरी समाधी किसी नस विशेष को दबा कर लगाई जाती है। उपरोक्त दोनों में साधक अपने को खूब अच्छी तरह से समझा करता है परन्तु इस समाधी में वह अपने पन को बिलकुल ही भूल जाता है। चौथी समाधी प्राणों को कुछ हल्के धीमे बेमालूम से करके आंखों को उलट कर लगाई जाती है। जो देखने में बड़ी भयानक और विचित्र होती है। इसको भाले भाले आदमी तो नहीं डाक्टर अवश्य समझ सकते हैं। अन्य भी कई प्रकार की हल्की भारी समाधी लगाई जाती है।

❀असली और नकली समाधी की पहिचान❀

ॐ असली समाधी की सब से उत्तम और मोटी पहिचान यह होती है कि असली समाधी में बैठे हुये योगी के अंगप्रत्यंग वजन, रंग, बाल रोमादि की घटती बढ़ती नहीं होती है। उसको क्षुधा पिपासादि की व्याधि नहीं सताती है। शरीर में किसी तरह की दुर्गन्ध आदि का असर नहीं हुआ करता है। उठने के

समय मुख पर सुस्ती आदि न होकर एक विशेष तरह की मुग्ध मुस्कराहट हुआ करती है और नकली समाधी में सब कुछ इसके विपरीत हुआ करता है अर्थात् शरीर घट जाता है। बाल बढ़ते हैं क्षुधा तृष्णा का भी यत्किञ्चित असर हुआ करता है। चहरा फीका, ढीला, सुस्त पड़ जाता है। किसी समाधी में तो समाधिस्त योगी के मुखसे लारें भी पड़ती रहा करती है। उठने पर शरीर में आलस युक्त अकड़ आदि हुआ करती है॥

❁ मृत संजीवनी और ब्रजौली ❁

ॐ अब यह बात विश्व का सिद्धान्त हो चुकी है कि विर्य का शरीर में रहना ही जीवन, सुख, शान्ति और मुक्ति है। तथा वीर्य का शरीर से विचलित होजाना ही मृत्यु दुःख और अांशती बढ़ना है। वैज्ञानिकों का कथन है कि एक बार में जितना वीर्य खर्च होता है उतने से मनुष्य के १० दिन के जीवन की मौत हो जाती है। यह आधुनिक वैज्ञानिक मत है। जो अभी तक इस विषय में बिलकुल ही अन्धा है। प्राचीन ब्रह्मचर्य विज्ञान इतने से ही सन्तुष्ट नहीं होता है। वह तो वीर्य के एक बिन्दु के नाश को भी पूर्ण मौत मानता है। एक विद्वान् का कहना है कि बिन्दु खर्च करते समय अपने सिर के नीचे कफन अवश्य रखो क्यों कि बिन्दु खर्च ही मृत्यु का सच्चा स्वरूप है। यदि सन्तान बनाने की आवश्यकता न होती तो हमारे पूर्वज कभी बिन्दु खर्च

करने की आज्ञा ही न देते। बिन्दु के खर्च करनेमें एकमात्र सन्तान बनाना ही गुण है। बाकी सब हानि ही हानि है। इतना सब होते हुए भी यह कामुक संसार वीर्य को ऐसा खर्च कर रहा है जैसे कि विक्षिप्त अपनी बुद्धि का और मूर्ख अपने धन को किया करता है। वीर्य को ऊर्ध्वगामी बना कर मनुष्य मृत्यु के भय से छूट सकता है। जैसे कि— "ऊर्ध्वरेता भवति यावत् तावत् काल भयं कुतः" मौत को मार सकता है। जैसे कि— "ब्रह्मचर्येण तपसा देवामृत्युमुपाघ्नत"। इच्छा जीवन और इच्छा मृत्यु को प्राप्त कर सकता है। प्रातः स्मरणीय भीष्मजी में उपरोक्त सर्व ज्ञान विद्यमान थे। महर्षि शुक्राचार्यजी मृत्यु संजीवनी विद्याके सिद्धहस्त थे। उनका नाम शुक्राचार्य उनकी शुक्र सम्बन्धी निपुणता का परिचायक है। वे जानते थे कि मनुष्य के किस विशेष तन्तु से वीर्य का सम्बन्ध विच्छेद हो जाने पर मृत्यु और किस स्नायु विशेष से वीर्य का सम्बन्ध जुड़ जाने पर मृत मनुष्य जीवित होजाया करता है। उनको वीर्य विज्ञान के साथ प्राण विज्ञान का भी पूर्ण बोध था, इस बोध के कारण वे असुरों के गुरु कहे जाते थे। उपरोक्त दोनों शब्दों के मिलने से पता लग जाता है कि शुक्राचार्य वीर्य से प्राण बनाने वाली विद्या के गुरुत्व को भली प्रकार से जानते थे। जो शुक्र के आचरणों द्वारा अशु प्राणों में जीवन आनन्दरञ्जन बना सकता हैं, वही शुक्राचार्य हुआ करता है। इस शुक्रविद्या और प्राणविद्या में पूर्ण निपुण बनकर इन दोनों के तात्विक सम्बन्ध

के विज्ञान को बताना ही बज्रौलीमुद्रा का तात्विक विज्ञान है। जो साधक उपरोक्त बज्रौली सम्बन्धी वीर्य-प्राण के सम्बन्ध विच्छेद के विज्ञान को पूर्णतया समझ लेगा वह मृत्यु-संजीवनी विद्या में अवश्य सफल होगा।

❀ मौत दो प्रकार की होती है ❀

ॐ मौत दो प्रकार की होती है। एक अधूरी दूसरी पूरी-अधूरी मौत उसको कहते हैं जो डर से, डूबने से, बिजली से, हार्टफेल से, मिर्गी से, सर्प काटने से, या अन्य भी किसी अचानक ढंग से, हुआ करती है। अर्थात् जिसमें इन्द्रिय संचालन शक्ति का नाश न होकर किसी कारण वश शून्य हो जाया करती हैं, वही मृत्यु अधूरी मृत्यु कही जाती है। वैज्ञानिकों ने इस मृत्यु का समय कुछ मिनट और भारतियों ने बारह घण्टे तक माना है। सिद्धान्त से जब तक शरीर में उदान और धनंजय वायु तथा ऊर्ध्वरेतस तत्व रहा करता है तब तक मृत्यु अधूरी ही रहा करती है। इस मृत्यु से मरे हुए प्राणी को ही मृतसंजीवनी विद्या बिन्दुयोग (बज्रौली) की पूर्ण सिद्धि से जीवित किया जा सकता है। यदि वैज्ञानिकों का इधर यत्किञ्चित भी ध्यान हो गया तो विश्व का बहुत कुछ लाभ हो सकता है। क्यों कि भारतीय मत में उपरोक्त तीनों तत्व मृतक के जलने तक शरीर में रहा करते हैं। यदि वैज्ञानिको ने उन जीवन तन्तुओं को

समझ लिया जिनमें जाकर चार प्राण और चार उपप्राण और भौतिक वीर्य शून्यता की निद्रा में सोजाया करते हैं, और जिनमें जाने से शरीर में जीवन संचार होने लगा करता है; साथ ही इस जीवन तत्व को जगाने के साधनों को भी खोज लिया तो वह सहज ही मुर्दे को जिन्दा बनाने में सफल होने लगेंगे। बिन्दु योग ही इस गहन तत्व की कुञ्जी है।

❁ स्वाध्याय बल और बज्रोली ❁

ॐ कितने ही स्वाध्यायशील पठनपाठन प्रिय छात्र या अन्य भी कहा करते हैं की हम स्वाध्याय करना चाहते हैं परन्तु स्वाध्याय करते समय हमारे स्वाध्याय तन्तु इतने थक जाते हैं कि जिनसे स्वाध्याय करना तो दूर रहा हम अपने ऊपर मस्तक का रखना भी एक भयानक बोझ समझने लगते हैं उसकी थकान की सुशक्ता, डलता, निरसता से हमें स्वयं घृणा अरुचि उपरामता प्राप्त होने लग जाती है। यदि यह थकान सुस्ती हमको न हो तो नहीं जाने हम कितना स्वाध्याय कर सकते हैं इत्यादि बातों से मालूम हो जाता है कि आज भारत के स्वाध्याय बल की क्या दुर्गति हो गई है।

ॐ इस बात को कोई भी बुद्धिमान पुरुष समझ सकता है कि इस स्वाध्याय बल की निर्बलता, दुर्गति का कारण वीर्य की कमी और ब्रह्मचर्य का नाश ही है स्वाध्याय के साथ में नव वधू

का नहीं अपितु कुमारी सरस्वती का सम्बन्ध है जैसे कुमारी और बधू शब्द एक में नहीं रहते हैं तैसे ही वीर्य नाश और स्वाध्याय एक में नहीं रहा करते हैं। इस ही तत्व की रक्षा के लिये तो हमारे पूर्वजों ने स्वाध्याय के साथ में ब्रह्मचर्य का अमोघ सम्बन्ध जोड़ा है। जो कुमारी सरस्वती के समय को नव बधू के अधिकार में दे देते हैं उनके स्वाध्याय बल की दुर्गति हुआ करती है या यों कहो कि उनके अन्दर से जाती हुई कुमारी सरस्वती अपने स्वाध्याय बल को भी ले जाती है। अतः जिनको स्वाध्याय सरस्वती की उपासना करनी है उनको २५ वर्ष तक कभी अनाध्याय रूप नव वधू से सम्बन्ध जोड़ना नहीं चाहिये अर्थात् अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत सेवन करना चाहिये क्योंकि वीर्य रक्षा ही स्वाध्याय बल का बीजमंत्र है। २५ वर्ष तक स्वाध्याय तन्तुओं को वीर्य के प्रकाश का पूर्ण सेचन मिलने पर वह सौ वर्ष पर्यन्त स्वाध्याय कार्य करने योग्य हो जाते हैं। या यों कहो कि उनके स्वाध्याय बल का सौ वर्ष तक ह्रास नहीं होकर संयम पूर्वक जीने से उसमें दैनिक रूप से वृद्धि ही हो जाती है। यदि किसी कारणवश उपरोक्त स्वाध्याय तन्तुओं के बल का ह्रास होगया हो तो उसकी पूर्ति किसी वज्रौली के तत्ववेता गुरुद्वारा वज्रौलीमुद्रा करके की जा सकती है। वज्रौली का तत्ववेता योगी जानता होता है कि वीर्य का किन तन्तु विशेषों से सम्बन्ध हो जाने से स्वाध्याय बल की थकान हट जाती है और किन से सम्बन्ध होने पर बुद्धिबल ऋतम्भराशक्ती की प्राप्ति हुआ करती है

किनके संयोग से आत्म विद्या के तात्विक बल की प्राप्ति हुआ करती है। बज्रौली के तत्व का ज्ञाता पुरुष क्षण भर में तपे हुये स्वाध्याय तन्तुओं को अमृत के सदृश ठण्डे बना सकता है। थके हुये ज्ञान तन्तुओं को क्षणभर में स्फूर्ति सम्पन्न बना कर स्वाध्याय शक्तिसम्पन्न बना सकता है परन्तु यह सब तब ही हो सकता है जब साधक को तन्तु विज्ञान प्राप्त होकर वीर्य पर और अपान की सिद्धि होकर उसकी शक्ति तथा गति पर पूर्ण अधिकार हो जाया करता है।



❋ कुछ अन्य सहायक प्रयोग ●

ॐ जिन साधकों का वीर्य इतना निर्बल कमजोर अशक्त पतला पड़ गया है जो कि सांकल्प स्फूर्ति मात्र के ही आघात से बहजाता हो, जो बज्रौली के औजारों के स्पर्श को भी नहीं सह सकता हो उन साधकों के हितार्थ ॐ यहां कुछ उपयोगी नियम एवं औषधियों के प्रयोग देता है। यदि साधक इन प्रयोगों और औषधियों को चरित्र की पवित्रता, मन की शुद्धता और दृढ़ता के साथ सेवन करेंगे तो वे वीर्य की पुष्टि को प्राप्त होकर बज्रौली साधने योग्य अवश्य हो जायेंगे। यद्यपि ॐ चिकित्सक वैद्य, डाक्टर, हकीम और औषधि-विज्ञान का तत्ववेत्ता नहीं है तथापि ॐ के यह प्रयौग और औषधियें बारम्बार काम में लेने

से और निश्प्रिय महात्मा पुरुषों से प्राप्तव्य होने से शुद्ध निर्दोष अनुभूत हैं। जिनको पथ्य पूर्वक सेवन करने से साधकों को प्रकृतिभेद से लाभ अवश्य होगा। नियम निम्न लिखित हैं।

१ वीर्य-दोषी पुरुषों को गर्म जल से स्नान नहीं करना चाहिये अपितु इसके विरुद्ध ठण्डे जल से खूब मल २ कर नहाना चाहिये।

२ वीर्य-दोषी पुरुषों को अपने चरित्र, मन को बिल्कुल निर्दोष, शुद्ध, पवित्र बना लेना चाहिये। इनके पवित्रता के बिना यह रोग कभी जा ही नहीं सकता है।

३ वीर्य-दोषी पुरुषों को इतना गर्म दुग्ध या अन्य भी कोई खाद्य अथवा पेय वस्तु नहीं खानी पीनी चाहिये जिसका स्पर्शज तन्तुओं पर आघात पहुँचता हो।

४ वीर्य-दोषी पुरुषों को सोते समय अपने हाथ, पांव, मस्तक, रीढ़, गर्दन और गुह्य स्थानो को ठण्डे जल से धोकर सोना चाहिये।

५ वीर्य-दोषी पुरुषों को जब तक उनका मन पूर्णतया पवित्र शुद्ध, दृढ़ न हो जावे तब तक सब पोष्टिक, वीर्यवर्धक, उत्तेजक पदार्थों का त्यागकर चरित्र और मन के सुधार में लगा रहना चाहिये। अन्यथा उत्थान का मार्ग कठिन है।

६ वीर्य-दोषी पुरुषों को फैशन, विलास, शृंगार से अत्यन्त बचना चाहिये।

७ वीर्य-दोषी पुरुषों को सादे बिस्तर पर सोना, लंगोट लगाना, स्वच्छ, पवित्र सादे थोड़े स्वदेशी वस्त्र पहनना और सादा ही भोजन करना चाहिये।

८ वीर्य-दोषी पुरुषों को हलकी रोचक व्यायाम जैसे घूमना, तैरना कुछ आसनादि अवश्य करना चाहिये।

९ वीर्य-दोषी पुरुषों के रहने का मकान सजावट फैसन से रहित रोचक स्वच्छ पवित्र प्राकृतिक वायु से युक्त, गन्दे वातावरण से रहित होना चाहिये।

१० वीर्य दोषी मनुष्यों को भ्रष्ट सुसाइटियों का संग छोड़कर महान पवित्रतायुक्त लोगों की सुसाइटी में रहने बैठने की आदत डालनी चाहिये।

११ वीर्य दोषी पुरुषोंको सोने समय अपने आस पास के वातावरण को शान्तिपाठादि से बिल्कुल पवित्र, स्वच्छ, आदर्श बनाकर निम्न लिखित मंत्र की एक माला का एकाग्र चित्त से मंत्र के अर्थ का ध्यान करते हुए जप कर सोना चाहिये। मन्त्र यह है:—

ॐ अमोघवीर्याय विद्महे ऊर्ध्वरेताय धीमही तन्नोब्रह्मचर्यं प्रचोदयात्।

ॐ इन एकादश नियमोंका यथार्थ पालन करने वाला साधक कुछ ही दिनों में वीर्य-दोष से अवश्य छूट जायगा।

❀ कुछ औषधी प्रयोग ❀

१ ॐ अश्वत्थ (पीपल वृक्ष) के पक्के फलोंको खाने से वीर्य दोष जड़ मूल से चला जाता है। विधि यह है—पथ्य पूर्वक रह कर पके हुए रसयुक्त फल बारह मास तक आहार के रूपमें खानेसे साधक अमोघवीर्य को प्राप्त हो जाता है। ऐसा कितने ही महात्माओं का अनुभव है। साधक अपने सुभीते के अनुसार खाकर लाभ उठावे।

२ पीपल के पके हुये फलों का रस पीने से भी वीर्यदोष निर्मूल हो जाता है।

३ पीपल की डाढ़ी (जटा) की कच्ची कोपलों के चूर्ण को धारोष्ण दुग्ध के साथ में लेने से वीर्य दोष बिल्कुल मिट जाता है।

४ पके हुए सूखे पीपल के फलों के चूर्ण को कच्चे धारोष्ण दूध के साथ में लेने से वीर्यदोष मिट जाता है।

५ पीपल के गूंद का हलवा बनाकर खाने से भी वीर्यदोष का मिट जाना पढ़ा है।

६ बड़ के दूध को १ से २१ तक पतासों में एक बून्द रोज के हिसाब से बढ़ाकर लेने से भी वीर्यदोष मिट जाता है।

७ बढ़ की कच्ची कोपलों को छाया में सुखा चूर्ण बना कर

धारोष्ण दूध या ठण्डे जलके साथ में लेने से भी वीर्यदोष मिट जाता है।

८ उपरोक्त रीति से ही बड़ की डाढ़ी की कोपलों के चूर्ण से भी वीर्यदोष मिट जाता है।

९ गूलर के पके फलों को सेंधे नोन के साथ में खाने से भी वीर्यदोष मिट जाता है।

१० बिल्व के पके फलों के गूदे को कच्चे दूध में मिलाकर पीने से वीर्यदोष अवश्य मिटजाता है। इससे हड्डी और नसें भी बलवान होने लगती हैं।

११ बिल्व पत्र के पत्तों को रगड़ कर पीने से भी वीर्यदोष मिटजाता है।

१२ कीकर (बबूल) की कच्ची फलियों के रस का दूध में मिला कर पीने से वीर्यदोष मिट जाता है।

१३ कीकर की कच्ची फलियों को छाया में सुखा कर चूर्ण बना कर उसके लड्डू बनाकर खानेसे भी वीर्यदोष मिटजाता है।

१४ एक केले की पकी फली के छोटे २ टुकड़े करके पाव भर दूध में खीर बना कर उसमें सीजते में ही तीन माशे श्वेत मूसली का चूर्ण मिला कर खाने से वीर्यदोष अवश्य मिट जाता है।

१५ जलजमनी बूँटी को रगड़ कर ठण्डे पानी में पीने से भी वीर्यदोष मिट जाता है।

१६ ईसबगुल के सत को घृत सक्कर के साथ में जमा कर खाने से भी वीर्यदोष मिटजाता है।

१७ रतनजोति बूटी को ठण्डे पानी के साथ में पीने से वीर्य-दोष बहुत शीघ्र मिटा करता है।

१८ ब्राह्मी तीन मासे शंखपुष्पी ३ मासे चारों मगज ११ बदाम २१ काली मिर्च ठण्डे पानी में रगड़ आध पाव कच्चा दूध मिला कर पीने से वीर्य दोष मिटजाता है। बुद्धि बढ़ती है पागलपन हटता है विचारों में भी स्वच्छता आने लगती है।

१९ २ ½ तुलसी पत्र २ ½ पत्ते नीम के प्रातकाल खाने से वीर्य और रक्त की शुद्धि होती है।

२० पुनर्नवा (सांठी) की एक तोला जड़ को दर्दरी करके आधा सेर दूध और आधा सेर पानी मिला कर इतना उबालो जितना कि उसमें से पानी जल जावे फिर ठण्डा कर पीने से वीर्यदोप मिटजाता है नेत्रों की ज्योति बढ़ती है।

२१ एक तोला सालम एक तोला ताल मखाना १ तोला तुकमलंगा १ तोला इसबगोल का सत १ तोला विदारीगन्द १ तोला बीजबन्द ६ माशे छोटी इलायची के बीज ३ माशे केशर इन सब दवाइया को कूट कपड़ छान कर बराबर की मिश्री मिला कर शील गर्म दूध के साथ में ३ माशे की फाकी प्रतिदिन लेने से वीर्य की कमी पतलापनादि दोष अवश्य मिट जाते हैं। इन दवाईयां में से प्रकृति ने अनुकूल पड़ कर कोई दवाई साधक को पूर्ण लाभ पहुँचा सकती है।



उपसंहार

"बज्रौलीबाजों से सावधान"

ॐ किसी भी विषय को बताने के पहले उसकी भलाई, बुराई, कठिनाई और त्रुटियों को पाठकों के सम्मुख रखदेना ही उस विषय की सफलता का तत्व है। क्योंकि जबतक साधक इन भलाई आदि को पूर्णतया नहीं समझ लेगा तब तक वह उन से बचकर अपने लक्ष्य को नहीं पा सकता। अतः पाठकों का कर्त्तव्य है कि वह आगे लिखी जाने वाली बज्रौलीबाजों की धूर्त्तताओं से पूर्ण सावधान रहें। इस पूर्ण सावधानी के लिये ही ॐ ने इस लेख का शीर्षक बाज शब्द से युक्त रखा है क्योंकि भारतीय भाषा में बाज शब्द बहुत ही बुरा है। बाज शब्द जुड़ने से अच्छी से अच्छी बात भी सन्देहास्पद हो जाया करती है। इस कारण को ही लेकर पूने के बाबा विध्वंसक संघ ने अपना उद्देश बाबाबाजी का विध्वंस करना रखा है। बाबाबाजी ने भारतवर्ष की कितनी हानि की है, उसने भारतीय समाज और व्यक्ति को कैसे २ चकमे देकर किन २ आपत्तियों में डाला है, इन बातों को यह संघ बड़ी उत्तमता से जनता के सामने रख रहा है। इन सिद्धों के चकमे में बड़े २ राजा महाराजा सबकुछ खो चुके हैं। सैकड़ों बुद्धिमान अपनी बुद्धिमानी को निबु`द्धिपन में बदल चुके हैं। कुछ भी क्यों न कहो इन आसुरी सिद्धों की सिद्धियों ने बड़े २

घर गाले, नष्ट किये हैं। ॐ के देखते २ ही कितने ही बी. ए. एल एल. बी., एम. ए. आदि को अन्न खाना छुड़ाकर धूल खाना सिखा दिया है। इत्यादि बुराइयों से बचाने के लिये ही इस संघ ने बोबा के साथ बाज शब्द जोड़ा है। इस संघ के सदस्य कहते हैं कि हमारा ध्येय बोबाबाजी का विध्वंश करना है। ॐ के अनुभव में जैसे इस शब्द का अर्थ बाबाओं का नाश नहीं अपितु उनकी पाप लीलाओं का ही नाश है। वैसे ही बज्रौलीबाजों से सावधान का अर्थ भी उनकी पापलीलाओं से ही सावधान करने से है। वह पाप लीला यह है। एक बज्रौलीबाज ने प्रथम तो एक आदमी पर अपने बज्रौली सिद्ध होने की धाक जमाई और पीछे बज्रौली की परीक्षा पूर्ति के लिये उसकी स्त्री को मांगा यह बात उस पुरुष ने एक सच्चे महात्मा से (जिस पर उसको पूर्ण विश्वास था) पूछी तो उसने उत्तर दिया कि ऐसे आदमी को सूट कर देना चाहिये जो योग के नाम पर व्यभिचार करना चाहता है। अब तुम उस पापी का विश्वास मत करना। इस सावधानी के पश्चात् एक दिन उस सज्जन ने इस धूर्त्त से कहा कि बज्रौली के नाम पर किया हुआ व्यभिचार पाप नहीं होता। उस धूर्त्त ने कहा कि नहीं क्योंकि प्रथम तो बज्रौली का साधक पूर्ण व्यभिचारी और पीछे पूर्ण महात्मा होता है। अधिक से अधिक स्त्रीयों को भोग तृप्ति देना ही तो बज्रौली सिद्धि का मुख्य उद्देश है। एक दूसरे बज्रौलीबाज अध्यापक ने अपने एक विश्वास

पात्र से कहा कि अब मैं बज्रौली से दुग्ध खींचने लगा हूँ। अतः मुझको स्त्री की पूर्ण आवश्यकता है।

अमृतसर में तरणतारण रोड की नहर पर एक बगीचे में एक महात्मा ठहरे हुए थे। ॐ का एक मित्र उन से मिलने गया तो उस समय वह एक स्त्री से मैथुन कर रहा था। यह देख वह मित्र चुपके से लौट आये और मिलने पर उस घटना की ओर कुछ संकेत किया तो वह धूर्त बोला कि मैं उस औरत को बज्रौली सिखा कर अपनी बज्रौली की परीक्षा कर रहा था।

बद्रीयात्राके मार्गमें ॐ को एक बज्रौलीबाज नागा और अवधूतानी मिले। ॐ ने नागा से पूछा आप इस युवती का संग में क्यों रखते हैं। नागे ने कहा कि बज्रौली सिद्धि के लिये। ॐ ने पूछा क्या आप बज्रौली जानते हैं तो उसने उत्तर दिया कि हाँ अवश्यमेव जानता हूँ।

ॐ—क्या मुझे दिखा सकेंगे।

नागा—क्यों नहीं।

इतनी बात चीत के बाद उन दोनों ने ॐ को पाव भर पारा खींच कर बताया। यह सब होजाने पर ॐ ने अवधूतानी से अलग लेजाकर पूछा। क्या नागे में दूसरे पुरुषों से कुछ विशेषता है। अवधूतानी ने कहा नहीं कुछ भी नहीं

कहते हैं अभी तो हम सिद्धि के मार्ग में हैं विशेषता आगे मिलेगी। ॐ फिर तुम इसके जाल में कैसे फंस गई। उसने उत्तर दिया यों ही इसकी बातों से मूर्ख होकर। अब पछताने से क्या होता है।

एक युवती को एक बज्रौली बाज उड़ा लेगया। कुछ महीने बाद उस स्त्री ने मौका पाकर अपने घर वालों को पत्र लिख कर कहा कि किसी तरह मुझको इस धूर्त से बचाओ नहीं तो मैं आत्म-हत्या करलूँगी। मैं इसकी नीचता को न समझ कर ही इसके पाप जाल में फँस गई थी।

एक दिन एक बज्रौली के तत्व से अनभिज्ञ बज्रौलीबाज अपने मूर्ख मित्रों में बैठा हुआ अपने बज्रौली-सिद्ध होने की धाक जमा रहा था। वहां पर बैठे हुए एक सज्जन ने किसी दूसरे बज्रौली के विशेषज्ञ का नाम लेकर कहा कि उनको बज्रौली का अच्छा ज्ञान है। यह सुन कर पहिले तो वह धूर्त्त बिगड़ा और उक्त सज्जन की बात मूर्खता पूर्ण कहने लगा। परन्तु इस सज्जन के सत्य सिद्ध करने के साहस पर उस धूर्त नालायक ने उस विशेषज्ञ के लिये ऐसी बात कह डाली जिसको कोई भी सभ्य पुरुष नहीं कह सकता था। बात यह थी-तब तो उस विशेषज्ञ के पास में कोई दैनिक रूपसे १६ वर्ष की युवती अवश्य आती होगी।

उपरोक्त कथन से सहज ही सिद्ध हो जाता है कि वह नालायक बज्रौली में किस लक्ष्य से लगा है। दूसरी बात

यह है कि ऐसे युवतिउपासक वज्रौलीबाजों से जनता को कितना सावधान रहना चाहिये। यह धूर्त पार्टी एक उच्च शिक्षालय के अध्यापकों की थी। जिस शिक्षालय में ऐसे धूर्त शिक्षकों का जमघट हो, जिनकी उपासना का विषय युवती औरतों की चर्चा करना हो उसके छात्र कितने उत्तम होंगे, इस बात को कोई भी शिक्षा के तत्व का ज्ञाता जान सकता है। ॐ दावे के साथ कहता और सिद्ध कर सकता है कि वज्रौली की सिद्धि के लिये युवती साधक नहीं अपितु बाधक है। यह सब बातें उन पापियों की लीलाएँ हैं जो अपने व्यभिचार को धर्म बता कर जनता की आँखों में धूल झोंकते हैं।

बड़ौदा स्टेट के मेसाणे प्रान्त में से पांच सात कोस एक देहात के गाँव में एक वज्रौलीबाज साधू रहता था। वह अपनी इन्द्रिय से तेल को खींच कर भोली भाली जनता के सामने उसको मूत्र नली से निकाल कर दिया जला दिया करता था। दिया जला कर कहता था कि देखो मेरे मूत्र से दिया जला करता है। इसी तमासगीरी से उसने जनतासे पच्चीस तीस हजार रुपया ठगा और अन्त में वह महापुरुष डाकुओं द्वारा मारा गया। इत्यादि २।

अतः पाठकों एवं पाठिकाओं का कर्त्तव्य है कि वे इन आततायियों से सावधान रहें क्योंकि इस क्रिया में ॐ यदि अत्योक्ति नहीं करता है तो नब्बे प्रतिशत व्यक्ति कामासक्त होकर, नब प्रति

शत-धोखा देने की दृष्टि से और एक प्रतिशत बिन्दुलय द्वारा ब्रह्म प्राप्ति के लिये लगा करते हैं। परन्तु ॐ का इस कृपा पर लेख लिखनेका ध्येय यही है कि वीर्यदोषी पुरुषों को वीर्यदोष से मुक्त करके साधकों को ईश्वराभिमुख बनाना। यदि विचारों की पवित्रता से शुद्ध होकर कोई साधक इन साधनों को काम में लावेंगे तो वे वीर्यदोष से मुक्त अवश्य होंगे। वीर्यदोष के लिये जितनी विचारों की मलीनता घातक है उतनी मैथुन क्रिया भी नहीं। उदाहरणार्थ जैसे किसी नाली में एक दम बहुत जल डाल देने से वह धुल कर साफ़ होजाती है और थोड़ा २ डालने से सड़ने लगती है, वैसे ही हर समय के कामुक विचारों से वीर्य भी सड़न को प्राप्त होकर साधकों के नाना रोगों का कारण हो जाया करता है। अतः पाठकों का कर्त्तव्य है कि वह विचारों को परम पवित्र रक्खें, क्योंकि असंयमी त्यागी से संयमी भोगी उत्तम होता है।

कितने ही धूर्त बज्रौली न जानते हुये भी अपने को उसका सिद्ध बतला कर सैकड़ों साधकों को बज्रौली के साधनों में लगा कर रोगी बना कर मृत्यु के मुख तक पहुंचा देते हैं। कितने ही अनजान लोग बज्रौली के लिये कांच की नली काम में लेने को कहते हैं। ऐसे अनजानों के उपदेश से साधकों को सावधान रहने की आवश्यकता है, अन्यथा हानि होने पर मौत का मुकाबिला करना पड़ेगा।

कितने ही मूर्ख बज्रौली के साधक को पानी, दूध, खींच लेने पर रजाकर्षण की परीक्षा के लिए एक रबड़ की नली के बायें दायें खींचने वाले दो रेशम के डोरे बांधकर उस नली को इन्द्रिय में डालकर डोरी के बाहर वाले भाग को इन्द्रिय के दायें बायें बांधकर मैथुन करने के लिये कहा करते हैं। साधकों का कर्तव्य है कि ऐसे मूर्खों की बातें कभी न मानें। मानने पर रेशम के डोरे से इन्द्रिय पर रगड़ आकर उसके कट जाने पर लेने के देने पड़जायँगे। डोरे की रगड़ से स्त्री के गुप्त स्थान के फटजाने का भी भय रहा करता है। इस बात को रेशम के डोरे की तीक्ष्णता और करड़ेपन का जानने वाले सब ही पुरुष समझ सकते हैं।

ॐ ने निजी एवं साधकों द्वारा जो अनुभव इस सम्बन्ध में प्राप्त किया है उसे यथा साध्य इस छोटी सी पुस्तिका में संक्षेप में पाठकों के सामने रखने का प्रयत्न किया है। ॐ की यह हार्दिक उत्कण्ठा है कि विज्ञान-विशारद एवं शरीर-शास्त्र के विशेषज्ञ इस ओर विशेष ध्यान दें और इस योग का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर वीर्य क्षति से विश्व का आजकल जो बुरा हाल हो रहा है उसे रोकने में सहायक हों, विश्व कल्याण के भागी बनें। ॥ ॐ ॥



❁ शीघ्र ही प्रकाशित हो रही है ❁

महात्मा आनन्दस्वरूपजी "ॐ" के

अनुभूत, सरल एवं सर्वोपयोगी साधनों पर प्रकाश डालने वाली सचित्र पुस्तिका

उदर रोग से बिना मौत क्यों मरते हो

इस पुस्तिका में समस्त उदर रोगों को समूल नष्ट करने के लिये बहुत सरल और सजीव साधनों का विवेचन है। हरएक के सुभीते के लिये प्रत्यक्ष अनुभव किये हुए व्यक्तियों के कई फोटो चित्र भी देदिये हैं। इन साधनों का उपयोग कर कई भाइयों ने पूर्ण लाभ उठाया है।

"ॐ" महाराज को पूर्ण विश्वास है कि कोई उदर रोग का रोगी लगातार छ मास तक ठीक उनके आदेशानुसार इन साधनों का उपयोग करे तो उसके रोग समूल नष्ट ही नहीं होंगे अपितु वह भविष्य में फिर कभी उदर रोग से ग्रसित हो ही नहीं सकता।

पुस्तक की उपयोगिता देखते प्रथम संस्करण के शीघ्र खपजाने की सम्भावना है अतः पहले से ही अपना आर्डर नीचे के पते पर रजिष्टर करालेना ठीक होगा जिससे पुस्तक निकलते ही भेजी जा सके।

विनीत—

पुस्तक विक्रेता—
व्यास ब्रदर्स जालोरी गेट,
जोधपुर.

मन्त्री,
श्री मरुधर प्रकाशन मंदिर
जोधपुर.

शुद्धि-पत्र



पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
आ	१	हृद्यांगम	हृदयंगम
,,	४,६	शद्दृश्यता	सद्दृश्यता
,,	६	माग	मार्ग
इ	३	पपित्रता	पवित्रता
ई	२	नीयमान यथान्धा	नीयमानाः यथान्धाः
उ	४	हीग	होगी
,,	४	शद्प्रेरणा	सद्प्रेरणा
,,	२१	वज्रौसी	वज्रौली
ऊ	१६	चमतकार	चमत्कार
ऋ	८,११	साम्भवी	शाम्भवी
ऌ	७	आचार्यान्येव	आचार्याद्ध्येव
,,	८	प्रपयति	प्रापयति
,,	६	टमवेद्वीर्यवतो	भवेद्वीर्यवतो
,,	१०	वक्र	वक्तृ
,,	१०	समद्भव	समुद्भवा
ॡ	१२	वेददान्त	वेदान्त
१	७	भूलने	भूलने
,,	११	श्रङ्खला	शृङ्खला

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
,,	१६	मुक्ती	मुक्ति
२	३	वरती	करती
,,	१६	सलाका	शलाका
३	२	जता	घता
,,	१३	आधात	आघात
५	७	लेन	लेने
६	१५	आकर्शित	आकर्षित
८	२१	पूर्ण	पूर्ण
६	१७	बज्रौली	वज्रौली
१२	१	पवन-वस्नी	पवन-वस्त्रि
१२	४	सिद्धी	सिद्धि
१३	२	वस्त्रिका	भस्त्रिक
१४	४	सिद्धी	सिद्धि
१४	४	समाधी	समाधि
१६	८	स्तबन्ध	स्तम्भ
१७	११	सिद्धी	सिद्धि
१८	६,१४	अध्व	अधः
१८	१६	सुषुम्मणा	सुषुम्णा
१८	२२	शक्ती	शक्ति
१६	१४	शक्ती	शक्ति
२०	७	अनाभीभस्त्री	अनाभि-भस्त्रिका

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०	८	योनी-मुद्रा	योनि-मुद्रा
२०	१४	पश्चिमीतान	पश्चिमोत्तान
२०	१४	सुलभासन	शलभासन
२१	१६	स	से
२२	१	परणित	परिणत
२२	२	मनोभाओं	मनोभावों
२२	१०	इन्द्रि	इन्द्रिय
२३	४	लक्ष	लक्ष्य
२३	७	परमपरा	परंपरा
२३	१७	नर्वदा	नर्मदा
२३	१८	नीलगिरी	नीलगिरि
२३	१८	हिम लय	हिमालय
२३	१९	सगाधिस्त	समाधिस्त
२३	२०	वृति	वृत्ति
२७	३	अन्न	अन्न
२८	१७	हीन्तरिक्षं	अन्तरिक्षं
२९	१०	आराग्यता	आरोग्य
२९	१३	अभीशेष	अभिषेक
२९	१३	अथ	अर्थ
३०	१५	शाकर	शङ्कर

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३०	१८	शकराचार्य के	शङ्कराचार्य के
३२	२०	धारण	धारणात्
३५	४	आावान्तर	अवान्तर
३५	११	प्रियोगिता	प्रयोगिता
३८	१८	बिन्द	बिन्दु
४१	५	आनद	आनन्द
४२	१६	भौत्यिक	भौतिक
४२	१९	बन्दु	बिन्दु
४२	१९	पू१वेत्ता	पूर्ववेत्ता
५१	१९	शुष्मणागत	सुषुम्णागत
५२	३	शुष्मणा	सुषुम्णा
५४	९	विर्य	वीर्य
५४	११	आंशती	अशान्ति
५६	११	सांकल्प	सङ्कल्प
५९	१९	प्रयौग	प्रयोग
६०	१	निश्प्रिय	निस्पृह
६५	१८	चकमे	चक्रमे
६६	५	विध्वंश	विध्वंस
६९	१४	गूत्र	मूत्र
७०	३	कृया	क्रिया

बिन्दु-योग

अर्थात्

वज्रौली मुद्रा द्वारा वीर्य विजय

रचयिता:—

नैष्ठिक ब्रह्मचारी

महात्मा आनन्दस्वरूपजी

प्रकाशक:—

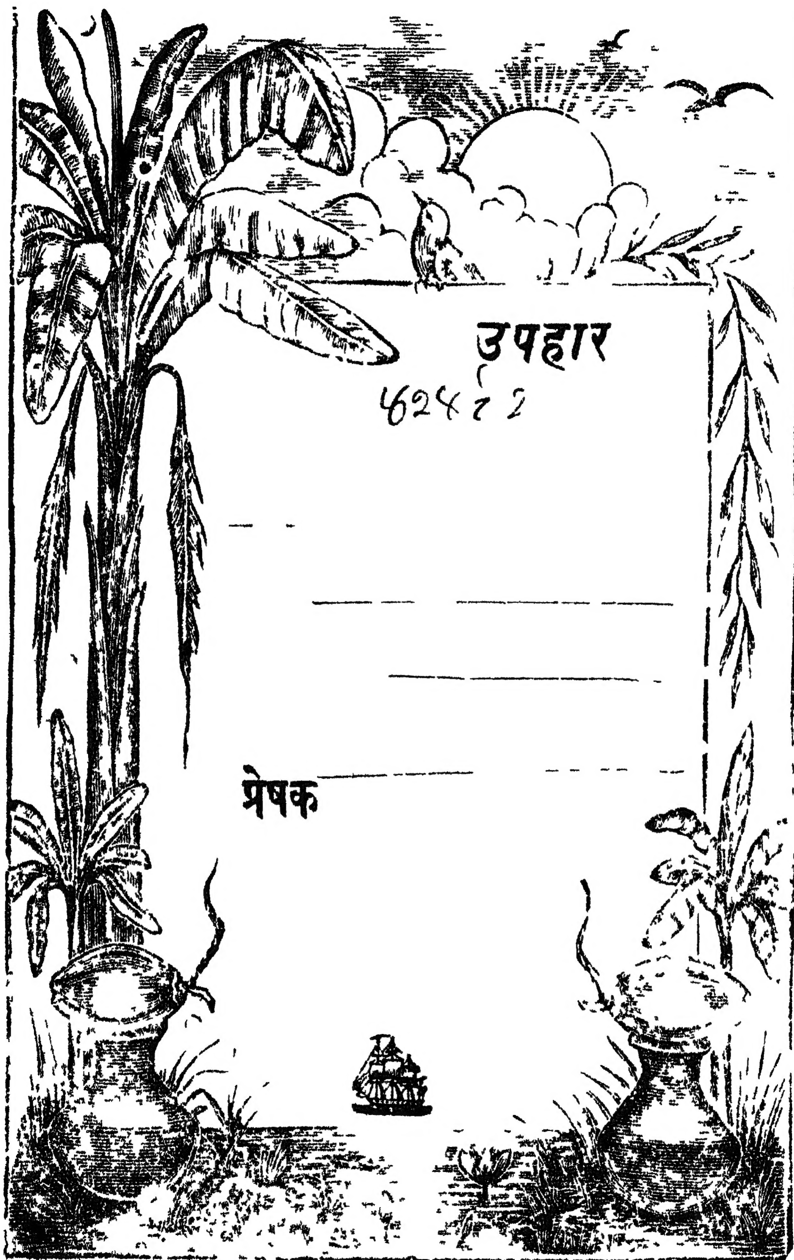
मरुधर प्रकाशन मन्दिर, जोधपुर.

मुद्रक:—

कुँवर सरदारमल थानवी

श्री सुमेर प्रिंटिंग प्रेस, जोधपुर

प्रथमावृत्ति	१ जनवरी	मूल्य
१०००	सन् १९३७	छः आने


उपहार
६२४८२
प्रेषक